चन्दामामा
अप्रैल १९६४

चन्दामामा

अप्रैल १९६४

चादरों, तकिया के गिलाफों
मेजपोशों को
लकलक
सफ़ेद
व अत्यधिक
सफ़ेद बनाये रखने के लिए
हमेशा टिनोपाल इस्तेमाल कीजिये

ग्राहकों को एक ज़रूरी सूचना!

ग्राहकों को पत्र-व्यवहार में अपनी ग्राहक-संख्या का उल्लेख अवश्य करना चाहिए। जिन पत्रों में ग्राहक-संख्या का उल्लेख न होगा, उन पर कोई ध्यान नहीं दिया जा सकेगा। पता बदल जाने पर तुरन्त नये पते की सूचना देनी चाहिए। यदि प्रति न मिले तो १० वीं तारीख से पहले ही सूचित कर देना चाहिए। बाद में आनेवाली शिकायतों पर कोई ध्यान नहीं दिया जाएगा।

व्यवस्थापक

चन्दामामा प्रकाशन

वडपलणी :: मद्रास - २६

मेरे
हमेशा से
मनपसन्द
साठे
बिस्कुट
साठे बिस्कुट एण्ड चाकलेट कं॰ लि॰ पूना-१

चन्दामामा

संचालक : चक्रपाणी

भारत की सभी भाषाओं में सम्पन्न लोक साहित्य है। भाषाओं के भिन्न होने पर भी लोक साहित्य में प्रायः समानता पायी जाती है।

और लोक साहित्य का बहुत-सा भाग बाल या किशोर साहित्य के रूप में भी प्रस्तुत किया जा सकता है।

हम "चन्दामामा" में भिन्न भिन्न भाषाओं का लोक साहित्य अक्सर देते रहते हैं।

वर्ष : १५ अप्रैल १९६४ अंक : ८

भारत का इतिहास

दिल्ली साम्राज्य में सब से पहिले स्वतन्त्र हुआ बन्गाल। यह सम्पन्न प्रान्त है और दिल्ली से बहुत दूर है। इसलिए उसके शासक शुरु से ही दिल्ली का धिकार करते आये थे। सुल्तान बल्बन के बाद बन्गाल करीब करीब स्वतन्त्र हो गया। उसके बाद घियासुद्दीन तुगल्क ने फिर उसको वश में किया। उसको तीन प्रान्तों में विभक्त किया। लखनौति, सातगाँव, सोनारगाँव को राजधानी बनाया। ऐसा करने पर भी विद्रोह होते रहे। १३३६ के बाद फखुद्दीन सोनार गाँव का राजा बना। कुछ दिनो बाद उत्तर बन्गाल में अलाउद्दीन अली शा ने स्वतन्त्रता घोषित की और अपनी राजधानी लखनौती से पाण्डुवा बदल दी।

१३४५ सारा बन्गाल शंसुद्दीन इलियास शा के नीचे आया। इसके काल में और इसके लड़के सिकन्दर शा के काल में, दिल्ली सुल्तानों ने बन्गाल को वश में करना चाहा, पर वे अपने प्रयत्न में असफल रहे। सिकन्दर शा ३६ वर्ष परिपालन करके, १३९८ अक्टूबर में मर गया। इसके लड़के घियासुद्दीन अजम के पास, चीन के सम्राट ने दूत भेजा। इसने अगले वर्ष अपना एक दूत चीन भेजा। १७ वर्ष शासन करके, यह १४१० में मर गया। इसका लड़का हंजा शा नाम मात्र के लिए राजा था। इसकी जगह सचमुच राज्य करनेवाला राजा गणेश नाम का एक ब्राह्मण जमीन्दार था। गणेश ने अपने लड़के जदु (यदु) को गद्दी पर बिठाया। उसने इस्लाम स्वीकार किया और उसने जलालुद्दीन शा नाम से राज्य किया। यह १४३१ में

मर गया। उसका लड़का शंसुद्दीन १४४२ तक कुशासन करता रहा, फिर वह षड़यन्त्रकारियों द्वारा मार दिया गया। षड़यन्त्रकारियों के आपसी झगड़े के कारण बन्गाल का सिंहासन फिर इलियास शा के वंशजों के हाथ चला गया। नासिरुद्दीन अहमद् राजा बना।

नासिरुद्दीन ने १७ वर्ष शासन किया और वह १४६० में मर गया। इसके लड़के रुक्नुद्दीन के पास अनेक अबीसिनीयन गुलाम थे। उनमें से कई को इसने बड़े बड़े पद दिये। इसने १४७४ तक और इसके लड़के यूसुफ़ शा ने १४८१ तक शासन किया।

चूंकि यूसुफ़ शा का लड़का अक्लमन्द न था, इसलिए बन्गाल का सिंहासन नासिरुद्दीन महमद् के लड़के फथशा के हाथ आया। पर एक हिंजड़े के नेतृत्व में अबीसिनियों ने षड़यन्त्र किया और इसको मरवा दिया। हिंजड़ा बार्बक शा नाम से राजा बना और फथशा के विश्वासपात्र इन्दील खान द्वारा मार दिया गया। इसके १४८९ तक शासन करने के बाद फथशा का लड़का दूसरा महमूद शा राजा बना। पर अगले साल सिदीबद्र नामक अबीसिनियन ने उसकी हत्या की, गद्दी हथियायी और बड़ी क्रूरता से करीब तीन साल राज्य किया। इसका मन्त्री अलाउद्दीन हुसेन बड़ा योग्य था। राज-कर्मचारियों ने राजा को १४९३ में कैद कर लिया और मन्त्री को राजा बना दिया।

यह अरब था। इसके वंशजों ने बंगाल पर करीब पचास साल तक शासन किया। उनमें से कई ने बड़े उपयोगी काम किये। हुसेन शा ने कई शिलालेख खुदवाये।

उसके सिक्के काफी इधर उधर मिलते हैं। सर्व प्रिय बंगाल के शासकों में वह भी एक है। इसने बंगाल राज्य का उड़ीसा तक विस्तार किया। मगध देश को जौनपुर के शासकों से ले लिया। असाम के अहोम राज्य पर हमला किया, कूच बिहार के कामतापुर को १४९८ को वश में कर लिया। १५१८ में वह मर गया। इसका बड़ा लड़का नसीब खान गद्दी पर आया। इसने नुसत शा नाम से राज्य किया और इसने कला, शिल्प और साहित्य को खूब प्रोत्साहित किया। "बरासोना मस्जिद "कदम रसूल" बड़ी मस्जिद गौर के पास बनवाई। महाभारत को उसने बंगाली भाषा में अनुवाद करवाया। इसकी राजमहल में हिंजड़ों ने १५३२ में हत्या करवा दी।

इसके बाद, इसका लड़का अलाउद्दीन फिरोज शा राजा बना। इसने केवल तीन महीने ही राज्य किया। उसके चाचा घियासुद्दीन मुहमद शा ने उसकी हत्या करवा दी। वह मुहमद शा, हुसेन शा वंश का आखिरी बंगाली राजा था। इसे शेरखान सूर ने बंगाल से भगा दिया।

जौनपुर :

तैमूर के समय में, जो जौनपुर राज्य स्वतन्त्र हो गया था, बुह्लाल लोदी के समय में फिर दिल्ली साम्राज्य में आ गया। इस काल में जिन राजाओं ने शासन किया, उनमें शर्की वंश प्रसिद्ध है। ८५ वर्ष तक इन्होंने राज्य किया। उनमें विख्यात था इब्राहीम शा शर्की। इसने १४०२ से ३४ वर्ष शासन किया। वह विद्वान था और साहित्य प्रिय भी।

महाभारत

जब द्वारका में यादव वंश क्षीण हो रहा था, तब हस्तिनापुर में युधिष्ठिर के शासन का ३७ वाँ वर्ष पूरा हो रहा था। जो उत्पात द्वारका में देखा गया, वह हस्तिनापुर में भी हो रहा था। पत्थर बरसे, उल्कायें गिरीं। सूर्य और चन्द्र तीन तीन रंगों में दिखाई दिये। इतने में दारुक उस देश आया। और जो कुछ गुजरा था, उसने पाण्डवों को बताया।

पाण्डव विश्वास नहीं कर पाये कि मय कृष्ण के सारा यादव वंश नष्ट हो गया था। युधिष्ठिर ने अपने भाइयों से पूछा कि तब क्या किया जाना चाहिए था।

अर्जुन यह कहकर कि, द्वारका में, वह अपने मामा से मिलने जा रहा था, दारुक के साथ रथ में निकल पड़ा।

द्वारका की हालत विधवा स्त्री की तरह थी। अर्जुन को देखते ही अन्तःपुर की स्त्रियाँ रो पड़ीं। सत्यभामा, रुक्मणी ने अर्जुन को नमस्कार किया। बैठने के लिए आसन दिया। पर वे कुछ कह न पाये। अर्जुन भी उन स्त्रियों को देखकर डर-सा गया। फिर भी उसने उनको आश्वासन दिया और कृष्ण के बड़प्पन के बारे में कहकर वसुदेव के पास चला गया।

वसुदेव ने शोक के कारण, पलंग पकड़ रखी थी। अर्जुन के पैर छूते ही, उसको गले लगा लिया। उसने कहा—"बेटा, सब गुजर गये हैं। उनकी मौत की खबर सुनकर भी अभी जीता हूँ। तुम्हें सात्यकी प्रद्युम्न पर कितना प्रेम था। उसी के कारण इतने आदमी मारे गये। कृष्ण के

अभिमानियों के कारण यह काम हुआ। यादवों की रक्षा के लिए कृष्ण ने भी कोई कोशिश न की। किसी को क्यों दोष दिया जाय? मुनियों का शाप था। अब मुझे जीने की इच्छा नहीं है। आहार छोड़ दिया है। कृष्ण मुझसे कह गया था कि तुम आओगे और उसने सब स्त्रियों को तुम्हारे साथ मुझे भेजने के लिए कहा था। इसके बाद, द्वारका भी समुद्र में डूब जायेगी।"

इसलिए उसके कहे अनुसार अर्जुन ने मन्त्रियों और ब्राह्मणों के साथ विचार विमर्श किया। उसने घोषणा करवायी "स्त्रियों को यात्रा के लिए तैय्यार होने के लिए कहो। युवराज वज्र को भी मैं अपने साथ ले जाऊँगा। रत्न आदि को भी इकट्ठा कीजिये। आज से, सात दिन द्वारका समुद्र में डूब जायेगी। सब निकलिये। देर न हो।"

अर्जुन ने रात वहीं बितायी। अगले दिन वसुदेव ने योग समाधि में प्राण छोड़ दिये। वसुदेव के प्रिय स्थल पर ही उसका दहन संस्कार कर दिया गया। उसके साथ उसकी पत्नियाँ, देवकी, भद्रा, रोहिणी, मदिरा भी सती हो गईं। वज्र आदि यादव राजकुमारों ने उस के लिए जल तर्पण किया।

फिर अर्जुन उस जगह गया, जहाँ यादव मर गये थे। युद्ध भूमि की तरह, वे जगह जगह मरे पड़े थे। तीन पत्तियों की घास ने उनकी जान ले ली थी। यादवों का अर्जुन ने यथाविधि संस्कार करवाया। उसने कृष्ण और बलराम की लाशें खुजवाईं। उनका दहन संस्कार करवाया।

अर्जुन हस्तिनापुर के लिए, सात दिन बाद निकल पड़ा। रथ निकल पड़े। कई में घोड़े जुते हुए थे, बैल, गधे ऊँट आदि थे।

यादव स्त्रियाँ अर्जुन के साथ निकल पड़ीं। बूढ़े और बच्चे सब एक ही झुन्ड में चले। अर्जुन सब लोगों को लेकर चला जा रहा था और उसके पीछे द्वारका डूबती जा रही थी।

उस दिन तक जो द्वारका में ही थे। उनको यह दृश्य अद्भुत लगा।

सुन्दर वन, पर्वत, पार करके अर्जुन जहाँ रुकना चाहिए था, वहाँ रुकता पंचनद पहुँचा। वहाँ चोरों के गिरोह ने उन पर हमला किया। वे हज़ारों के संख्या में थे। लाठियाँ चलाते, पत्थर फेंकते, उन पर उन्होंने आक्रमण किया। उन्होंने देखा कि उन यात्रियों में अर्जुन ही अकेला योद्धा था। अर्जुन ने उन्हें जाने के लिए कहा और वे न गये, तो मारे जाओगे, अर्जुन ने धमकाया। पर उन्होंने परवाह न की। अर्जुन ने गाण्डीव पर बाण चढ़ाने की कोशिश की। उसे यह काम बड़ा कठिन लगा, जब उसने अस्त्रों को याद करने की कोशिश की, तो उसे एक भी अस्त्र याद न आया। वह अपने ही असामर्थ्य पर शर्मिन्दा था, उसने मामूली बाणों से कुछ चोरों को मार दिया। अर्जुन देखता रह गया और चोरों का गिरोह यादव स्त्रियों को उठाकर ले गया।

इस प्रकार अपमानित होकर, अर्जुन बाकी यादवों को लेकर, धन लेकर हस्तिनापुर पहुँचा। द्वारका से आये हुए लोगों के लिए, भिन्न भिन्न स्थलों पर व्यवस्था की गई। कृतवर्मा, उसकी पत्नी और लड़के को मृत्तिकंवित में रखा गया। वज्र का इन्द्रप्रस्थ में ही राज्याभिषेक किया गया। वहीं कई यादवों के रहने का इन्तजाम किया गया। सरस्वती के लड़के

को राजा बनाया गया। कृष्ण की पत्नियों में से रुक्मणी, जाम्बवती, हैमवती आदि सती हो गई।

सत्यभामा आदि तपस्या करने के लिए हिमालय पार कर, कलाय नामक ग्राम में पहुँचीं। अपने साथ आयी हुई यादव स्त्रियों को जगह जगह ठहराकर, अर्जुन, व्यास मुनि के आश्रम में गया। उन्हें अपना नाम बताकर नमस्कार किया। उन्होंने अर्जुन का कुशल क्षेम पूछा। उसे बैठने के लिए कहा। उसको दुखी पा उन्होंने उसका कारण पूछा।

अर्जुन ने उनसे कहा—"महात्मा! कृष्ण बलराम मर गये हैं। यादवों ने एक दूसरे की हत्या कर दी है। बिना कृष्ण के मैं कैसे जीवित रहूँ! अब भी वह दृश्य मेरी आँखों के सामने है, जब वे युद्ध में मेरे रथ को चलाते थे। यही नहीं। मेरी सारी शक्ति समाप्त हो गई है। अस्त्र सब चले गये हैं। चोर मेरे देखते देखते ही यादव स्त्रियों को उठाकर ले गये और मैं कुछ भी न कर सका। अब मैं क्या करूँ! आप ही बताइये।"

"काल के कारण ऐसे परिवर्तन होते हैं। कृष्ण जिस काम के लिए आये थे, वह हो गया है। इसलिए वे चले गये हैं। तुम्हारे अस्त्र भी काम करके चले गये हैं। तुम्हारे भी उत्तम गति प्राप्त करने का समय हो गया है। इसके लिए तुम्हें चिन्ता करने की कोई आवश्यकता है।" कहकर व्यास ने अर्जुन को काल प्रभाव के बारे में उपदेश दिया। अर्जुन हस्तिनापुर वापिस आ गया।

[३३]

[केशव और उसके साथियों को भूत भगानेवालों ने पकड़ने की सोची। परन्तु रात के समय उनकी आँखों में धूल झोंककर वे पहाड़ की चोटी पर पहुँचे। कुछ दूरी पर उनको एक भयंकर घाटी दिखाई दी। जब वे एक बेल पकड़कर घाटी में उतर रहे थे तो भूत भगानेवालों का गिरोह आया और वे उन बेलों को काटने लगे। बाद में :—]

जब उन्होंने देखा कि भूत भगानेवाले लोग, उस बेल को काट रहे थे, जिसके सहारे वे नीचे उतर रहे थे, तो केशव, जयमल और जंगली गोमान्ग डर के कारण काँप उठे। परन्तु अगले क्षण ही उनको धीरज भी हुआ। "इतने कष्टों के सहने के बाद, इतनी दूर आने के बाद हम यहाँ मरने जा रहे हैं, इस पर मैं विश्वास नहीं करता।" केशव ने भरी आवाज में कहा।

"तुमने ठीक ही कहा है, केशव मेरे पैर को कोई टिकने की जगह मिल गई है। तुम बेल पर अपना भार कम करो और देखो कि हाथ को कुछ मिलता है कि नहीं। अच्छा होगा, यदि हम बेल को किसी पत्थर से बाँध दें। तब अगर

बेल टूट भी गई, तो हम यकायक घाटी में नहीं गिरेंगे।" जयमल ने कहा।

जयमल अभी कह ही रहा था कि जंगली गोमान्ग, जो तीनों से ऊपर था, जोर से चिल्लाया—"इन दुष्टों ने बेल काट दी है।" फिर वह सिर के बल गिरा। उसके साथ, केशव और जयमल की भी पकड़ ढीली हो गई। उन्होंने भी दो तीन बार हवा में कलाबाजियाँ खायीं। पर उन में से किसी ने भी, अपने हाथ की बेल नहीं काटी। इस होशियारी ने ही उनको बचाया। पर आँख मुँदते ही फिर उनके शरीर पत्थरों को छू रहे थे।
"बेल काट दी गई है, पर सौभाग्य से वे चोटी के नीचे के पत्थर से लिपट गई है।" जयमल ने कहा।

केशव और गोमान्ग कुछ जवाब देने जा रहे थे और पर्वत के शिखर से भूत भगानेवाले, जोर से कह रहे थे—"ये दुष्ट, अब नीचे के पत्थरों पर गिरकर टुकड़े टुकड़े हो गये होंगे। जो कोई हमारे पक्षियों के पंख काटने आयेगा, उनकी भी यही गति होगी।"

उनकी आवाज से सारी घाटी गूँज उठी। बड़े बड़े पेड़ों पर पैर फैलाये खड़े हुये गण्डभैरण्ड पक्षी, गला फाड़ फाड़कर चिल्लाने लगे। कहीं एक शेर भी गरजा। इस भयंकर गर्जन और शोर को सुनकर केशव और उसके साथी सम्भले ही थे, कि कोई मानव स्वर, जैसे कोई क्रुद्ध हो उठा हो, सुनाई दिया। "किंकर! क्या यह हो हल्ला हो रहा है! शेर मृगराज भी, लगता है, उठ गया है।"

तुरत एक और आवाज आयी "जगभोजी गुरो।" भूत भगानेवालों ने किसी को मारकर भयंकर घाटी में डाल दिया

है। इसी कारण यह सब शोर हो रहा है। "जो मरा है, वह मकपुर राजा का गुरु तो नहीं है?" जगभोजी ने कहा।

"वे! उनके यहाँ रास्ता मालूम करके आने से पहिले ही हम राजकन्या से विवाह करके धन आदि लेकर, अन्तर्धान हो जायेंगे। उसके बाद, वे इस घाटी के गण्डभैरण्ड, अजगर और क्रूर जन्तुओं के शिकार होकर रहेंगे।" किंकर ने कहा।

"हाँ, मगर राजकन्या! किंकर, वह तो तुम भूल ही गये हो। अमावस्या अभी तेरह दिन दूर है। तब तक मैं उससे नहीं मिल सकता। कहीं ऐसा न हो, कि वह हँस सुन्दरी, शोर शराबे से उठ गई हो!" जगभोजी ने कहा।

किंकर का ज़ोर से हँसना सुनाई दिया। फिर उसने आवाज ऊँची करके कहा—"गुरो, वह कन्या कल्पकवल्ली, सुन्दर हँस नहीं है। उसका पिता, मकपुर राजा और उसका गुरु उसकी रक्षा कर सकेंगे, अभी तक वह इसी भ्रम में है। इसलिए आपको हल्की नज़र से देख रही है। उसका इस भयंकर घाटी से भयभीत हो जाना अच्छा ही है।" किंकर ने कहा।

इसके बाद सब जगह खामोशी थी। घाटी के नीचे से आती हुई बातचीत को सुनकर केशव, जयमल्ल, जंगली गोमान्ग, आश्चर्य और भय से काँप उठे। उन्होंने आपस में कुछ कहना भी चाहा, पर किसी के मुख से आवाज तक न आयी। आखिर जयमल्ल ने कंपती हुई आवाज में पूछा—"क्यों, केशव, सुना!"

"सुना है। हम से पहिले ही यहाँ कोई मान्त्रिक पहुँचा हुआ है, उसके आधीन, हमारे मकपुर राजा की लड़की कल्पकवल्ली है। वह भी हम जिस धनराशि

के लिए आये हैं, उसी के लिए आया हुआ है।" केशव ने कहा।

जयमल ने कुछ भी न कहा। वह विचार में पड़ गया। सौभाग्यवश उनको नीचे कुछ पत्थर, पहाड़ से आगे की ओर निकले हुए दिखाई दिये। बेलों पर से वे चुपचाप उन पर फिसल गये और अन्धेरे में इधर उधर देखने लगे।

"हमें त्रक्षपुर छोड़े बहुत दिन हो गये हैं। इस बीच, लगता है, वहां बहुत-से परिवर्तन हो गये हैं। राजकुमारी कल्पकवल्ली इस भयंकर घाटी में कैसे आयी ! यह जगभोजी कौन है और वह शिष्य कौन है ! क्या हम राजकुमारी की रक्षा कर सकेंगे जयमल !" केशव ने पूछा।

जयमल की हालत ऐसी थी कि वह केशव की बात का जवाब नहीं दे पा रहा था। वह जगभोजी और किंकर के सम्भाषण का क्या रहस्य था, जानने की कोशिश कर रहा था और जगभोजी ने जो "मृगराज" कहा था उसका मतलब जानने के लिए वह तरह तरह के अनुमान कर रहा था।

"क्यों केशव, क्या तुम्हें यह बात याद है ! जब त्रक्षपुर के पास के पर्वतों में थे, तब त्रक्षदण्डी मान्त्रिक ने कालभैरव को तुम में बुलाया था। तब तुमने उस बेहोशी में कुछ रहस्य बताये थे। फिर बाद में मैंने तुमको बताया था कि वे क्या क्या थे।" जयमल ने कहा।

केशव ने सन्देह से जयमल की ओर सिर घुमाकर कहा—"वह क्या बात थी, मुझे तो याद नहीं है। इस भयंकर घाटी में बहुत ही बड़ी धनराशि है, यही बात मुझे याद रह गई है।"

तब तक जंगली गोमान्न ने, जो चुपचाप उनकी बात सुन रहा था, यकायक केशव

की ओर सिर मोड़कर कहा—"मेरी आखों को कहीं घाटी में दीये की रोशनी दिखाई दे रही है, कानों को हाथियों का चीत्कार सुनाई पड़ रहा है।"

"मुझे तो कोई ऐसी रोशनी या आवाज नहीं सुनाई दे रही है। मुझे कोई बेहोशी-सी आ रही है। मुझे इस भयंकर घाटी का न सोना चाहिये, न चान्दी ही। मैं ऊब गया हूँ। मैं मरने से नहीं डरता। परन्तु मरने से पहिले यदि एक बार अपने पिता को देख सकूँ, तो कितना अच्छा हो।" केशव आँखें मूँदकर पीछे खड़ा हो गया।

जयमल ने केशव का कन्धा हिलाते हुए कहा—"अरे, धीरज न खोओ, केशव! कितनी ही आपत्तियों का धैर्य से सामना करके यहाँ आये हैं, जगमोजो और उसके शिष्य किंकर की बात सुनकर तो मुझे ऐसा लगता है, जैसे हमारे कष्टों के दिन लद गये हैं। हम तुम्हारे बूढ़े पिता को ही नहीं, बल्कि ब्रह्मपुर के राजा और राजगुरु सभी को देख सकते हैं। इस घाटी की निधियाँ हमारी ही हैं। इनको पाने की शक्ति हम में है। उन पर अधिकार भी हमारा है, इसमें सन्देह करने की कोई आवश्यकता नहीं है।"
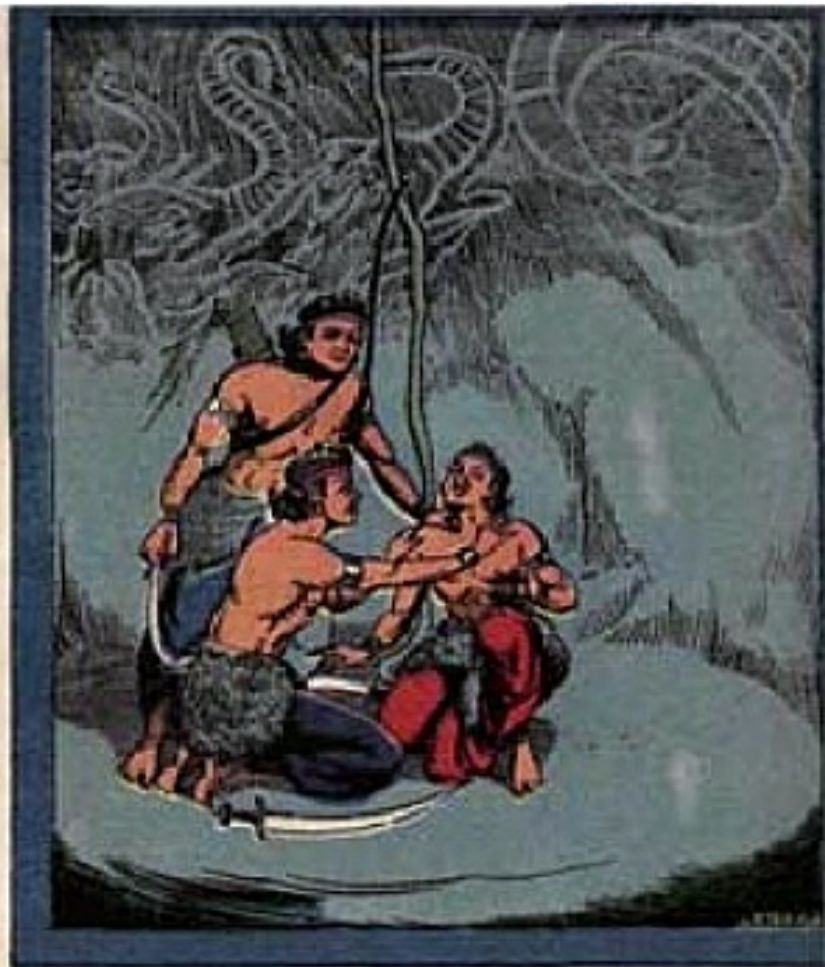
"भविष्य हमारे अनुकूल है, यह तुम कैसे इतने विश्वास से कह सकते हो!" केशव ने पूछा।

जयमल कुछ देर सोचता खड़ा रहा। फिर उसने दबी आवाज में कहा—"जब कालभैरव ने तुम में प्रवेश किया था, तब तुमने ब्रह्मदण्डी मान्त्रिक से यह कहा था—"विन्ध्यारण्य के परे एक बड़ी घाटी है, वह ही भयंकर घाटी है। उस घाटी में ऊँचाई पर एक पीपल का पेड़, उसके
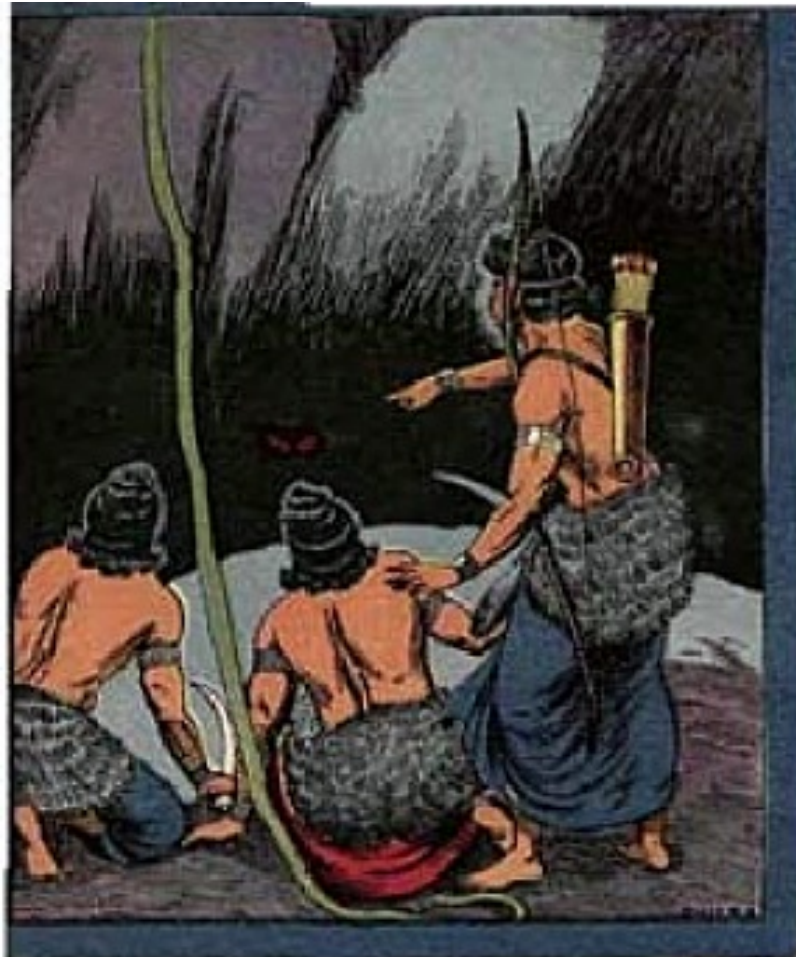
इससे पहिले जगभोजी ने जो कहा था।" "मृगराज भी उठ गया है," तो उसका अर्थ यही था। इसका मतलब क्या है! हम सूर्योदय होते ही घाटी में उतरेंगे। उस मृगराज को हम मारने जा रहे हैं। उसका चमड़ा निकालकर....उसे.... जयमल्ल अभी कह ही रहा था कि उनके नीचे के पत्थरों के पास शेर ने भयंकर गर्जन किया। यह ध्वनि सुनते ही तीनों ने नीचे की ओर देखा। उनको अंगारे-सी दो आँखें, नीचे चमचमाती दिखाई दीं।

"यह ही मृगराज है। यदि हम ये आँखें देख पा रहे हैं, तो इसका मतलब है कि वह हमारी ओर देख रहा है।" जंगली गोमान्ग ने कहा।

"उसने हमें पहिचान लिया है, हमने उसे पहिचान लिया है। अच्छा है। एक दूसरे को मारने के लिए किसी को खोजने की जरूरत नहीं है। गोमान्ग! तुम्हारे पास जहर में बुझे हुए बाण हैं न!" जयमल ने कहा।

"हैं, तो क्या अभी शेर का शिकार किया जाय!" गोमान्ग ने पूछा।

नीचे एक खाम्बी, सूखा पेड़, चान्दनी रात, मृगराज को मारकर, चमड़ा निकालकर, उसे...." इसके बाद ब्रह्मपुर के राजगुरु ने अपनी मन्त्र शक्ति से तुम्हारा मुख बन्द कर दिया था।"

"यह सब तो ठीक है, सिवाय इसके कि हम भयंकर घाटी में आ गये हैं, बाकी बातें कितनी सच हैं, अभी तक इसकी सूचना नहीं मिली है।" केशव ने निरुत्साहित होकर कहा।

"कालभैरव के आवेश में जो कुछ तुमने कहा था, वह सच होकर निकलेगा।

"शिकार के लिए यह अच्छा समय नहीं है। इस अन्धकार में, हमारे मारे हुए मृगराज को जगभोजी उठाकर ले जा सकता है। हमें उसे छुपकर मारना होगा। यह तो भय नहीं है कि वह हमें छोड़कर चला जायेगा। क्योंकि उसको हमारी गन्ध मिल गई है, इसलिए हम उसे याद हैं और चूँकि हमने उसकी अंगारे-सी आँखें देख ली हैं, इसलिए वह हमें याद है। कौन किसको मारकर चमड़ा निकालता है, यह सवेरे देखा जायेगा। उस जगभोजी की खबर लेंगे।" जयमल्ल ने धैर्य से कहा। गोमान्न और जयमल्ल जब बातें कर रहे थे, तो केशव चुपचाप बैठा था। उन दोनों की बात खतम होते ही, उसने जयमल्ल की ओर मुड़कर, आश्चर्य से कहा—"मल्ल! कहीं मेरी अक्ल तो नहीं मारी गई है! ऐसा लगता है, जैसे मैं जागे ही जागे सपने देख रहा हूँ। घाटी में से यह क्या ध्वनि आ रही है! आश्चर्य हो रहा है।"

"क्या, तुम्हें हाथियों के चिंघाड़ने की ध्वनि सुनाई पड़ रही है?" जयमल्ल ने पूछा।

"हाथियों का चिल्लाना ही नहीं, घंटियों का बजना भी सुनाई पड़ रहा है। क्यों गोमान्ग? क्या तुम्हें ऐसी कोई ध्वनि सुनाई पड़ रही है।" केशव ने पूछा।

"यह सब कोई माया-सी मालूम होती है। मुझे घंटियों की ध्वनि ही नहीं, हवा के सहारे कुछ बातें भी आती मालूम होती हैं। सच कहा जाय तो किसी मन्त्र के प्रभाव से हमें ऐसा भ्रम हो रहा है।" गोमान्ग ने कहा।

जंगली गोमान्ग की बात सुनकर जयमल के मन में तरह तरह की बातें उठने लगीं। जैसा कि गोमान्ग कहा था, उस घाटी में सभी कुछ मन्त्रग्रस्त था। जगभोजी, ब्रह्मपुर की राजकुमारी कल्पवल्ली को यहाँ किस प्रकार ला सका? क्या इस घाटी से बिना एक कदम बाहर रखे ही उसने यह काम किया?

जयमल अभी इन्हीं पेचीदे प्रश्नों में उलझा हुआ था कि केशव सोच रहा था कि क्या अच्छा होता यदि इस समय मेरा पिता यहाँ होता। जंगली गोमान्ग सोच रहा था, यदि उसका सरदार यहाँ होता, तो राजकुमारी, जगभोजी के चुंगल से छुड़वायी जा सकती थी।

भयंकर घाटी के इस तरफ़ ये तीनों मित्र इस चिन्ता में थे, तो उस तरफ़ मैदान में, ब्रह्मपुर का राजा और राजगुरु सेना के बीच गड़े हुए डेरों में बैठकर आगे क्या करना था, इस विषय में सोच रहे थे। उनके सामने समस्या थी, "क्या सारी सेना को लेकर भयंकर घाटी में उतरा जाय? या कुछ अंगरक्षकों को लेकर घाटी में प्रवेश किया जाय?

(अभी है)

दुष्ट

कोशल देश के राजा मार्तन्डवर्मा के प्रमोदक नाम का लड़का और मालिनी नाम की लड़की थी। मालिनी छुटपन से, कुश देश में, अपने मामाओं के घर ही पाली-पोसी गई। प्रमोद ने सकल विद्यायें सीखकर देश यात्रा पर जाने की ठानी। अगर किसी देश में उसकी बहिन के लायक कोई वर मिला तो उसे देखने और वापिसी रास्ते में, मामाओं के घर से अपनी बहिन को लाने का निश्चय किया।

वह बहुत-से देश घूम धाम कर आखिर, कुश देश पहुँचा। भाई ने भिन्न भिन्न राजकुमारों के बारे में बहिन को बताया, पर बहिन को कोई पसन्द न आया। प्रमोदक कुछ दिन अपने मामा के घर अतिथि रहा, फिर वह मालिनी को लेकर कोशल देश के लिए निकल पड़ा।

वे दोनों, रथ में, जब जंगल में से आ रहे थे तो डाकुओं के एक गिरोह ने उन पर हमला किया। तुरत प्रमोदक ने तलवार निकाली। "उसने तलवार घुमाई तो एक तरफ छः सिर और दूसरी तरफ पाँच सिर कटकर गिर गये।" यह देख बाकी चोरों को काठ मार गया।

चोरों के सरदार ने, प्रमोदक से शरण माँगी। "शरण माँगना ही काफी नहीं है। तुम अपने गिरोह के साथ जंगल को छोड़कर चले जाओ।" प्रमोदक ने कहा।

"मैं वैसा ही करूँगा। मैंने बहुत-सा धन कमा लिया है। वह सब मैं तुम्हें

सौंप दूँगा। फिर मैं किसी और नगर में जाकर, जीवन निर्वाह का कोई और रास्ता ढूँढ निकाल लूँगा। अब आप दोनों मेरे घर आइये और मेरे घर दो दिन अतिथि रहकर जाइये।" सरदार ने कहा।

चूँकि, उसका आतिथ्य स्वीकार करने के लिए, मालिनी ने कोई आपत्ति न की थी, इसलिये, प्रमोदक अपनी बहिन को लेकर चोरों के सरदार के घर गया। वन में,

अगले दिन सवेरे, मालिनी ने अपने भाई से कहा—"मुझे बड़ा जबर्दस्त सिर दर्द हो रहा है। रात को मुझे सपने में एक भूत दिखाई दिया। उसने कहा कि मैं सिर दर्द के कारण मर जाऊँगी। फिर मुझे एक ऋषि दिखाई दिया और उसने कहा कि पूर्व की दिशा की ओर एक लाल पहाड़ के नीचे एक तालाब है। उसका पानी पीने से सिर दर्द कम हो जायेगा। नीन्द से उठते ही सिर दर्द शुरु हो गया है, वह लाल पहाड़ कहाँ है! वहाँ ले जाकर, मुझे कौन उस तालाब का पानी देगा। मैं जरूर मरूँगी।" वह रोने लगी।

"मैं जाकर पानी लाऊँगा। तुम धीरज रखो।" बहिन से यह कहकर, प्रमोदक, पूर्व की दिशा की ओर निकल पड़ा।

जब वह जंगल में बहुत दूर निकल गया तो एक भालू सामने आया। प्रमोदक ने उसकी परवाह न की और आगे चलता गया। कुछ दूर जाने के बाद एक बब्बर शेर उसे देखकर गरजा। उसकी भी उसने

जब वह वापिस जा रहा था, तो रास्ते में उसको, एक शेर, चीता और भालू खड़े दिखाई दिये। शेर ने मनुष्य की भाषा में कहा—"भाई, तुम सचमुच बहादुर हो, हमारे भय के कारण यहाँ कोई नहीं आता और अगर कोई कभी आया भी तो हमें देखकर भाग जाता है, नहीं तो हमें मारने की कोशिश करता है। परन्तु तुम सा निर्भय नहीं देखा। जो कोई इधर आया, हमारे द्वारा मारा गया। यदि तुम पर कोई आपत्ति आये, तो इस सींग में फूँकना।" यह कहकर, उसने अपने पाँव के पास की एक सींग दिखाई।

प्रमोदक उसे लेकर, चोरों के सरदार के घर आया। उसके दिये हुये पानी से मालिनी का सिर दर्द गया। उसने अपने भाई से कहा—"सुनती हूँ, कि जिस रास्ते पर तुम गये थे, वह बड़ा खतरनाक और भयंकर था। कहीं तुम पर कोई आपत्ति तो नहीं आई थी?"

"नहीं, तो" प्रमोदक ने कहा।

फिर चोरों के सरदार ने वह धनराशि दिखाई, जिसे उसने लूटा था। उसने उसमें से एक लोहे की जंजीर को निकालकर कहा—"जो इसे तोड़ सकेगा, वह सचमुच बलशाली है। आपकी बहिन ने बताया है कि आप बहुत बलशाली हैं, और आप इसे तोड़ सकते हैं। मैंने कहा कि आप इसे नहीं तोड़ सकते। दोनों ने बाजी लगाई है।"

"हमारा भाई जरूर तोड़ सकता है।" मालिनी ने कहा।

"असम्भव! आप मान जाइये कि आप नहीं तोड़ सकते। बाजी मैं ही मार जाऊँगा।" चोरों के सरदार ने प्रमोदक को सलाह दी।

मालिनी ने कहा—"भैय्या, मानो मत। इनको तोड़कर दिखाओ, बाजी मैं ही जीतूँगी।"

प्रमोदक ने एक क्षण सोचकर कहा—"तोड़ने का प्रयत्न करूँगा।" उसने हाथ बढ़ाये और चोरों के सरदार ने उसके हाथों में जंजीरें बाँध दीं। प्रमोदक ने बहुत कोशिश की, पर वह उनको तोड़ नहीं पाया।

मालिनी ने ज़ोर से हँसकर कहा—"मैं बाजी हार गई हूँ। बाजी के अनुसार मुझे चोरों के राजा से शादी करनी है। इन जंजीरों के कारण तुम अब गद्दी पर नहीं बैठ सकते। इसलिए तुम इस कोठरी में ही पड़े रहो। अब से मैं रानी हूँ। और मेरा पति राजा है।"

"क्या तुम्हें इस चोर ने ठग लिया है या तुम ही मुझे धोखा दे रही हो!" प्रमोदक ने अपनी बहिन से पूछा।

"अब क्यों तुम से कुछ छुपाया जाय! यह चोर मेरा पुराना साथी है। हम दोनों ने आपस में प्रेम किया है। मैंने जब इसे चोरी छोड़ने के लिए कहा, तो इसने कहा कि राज्य मिलने पर ही छोड़ूँगा। उसके राजा होने के रास्ते में तुम ही एक थे। इसलिए तुम्हें मारने के लिए अपने गिरोह के साथ आया और तुम से हरा दिया गया। तुम्हें एक और तरीके से मारने की सोचकर, मैंने सिर दर्द का बहाना किया और तुम्हें लाल पहाड़ भेजा। पर वह चाल भी न चली। तुम जीते जी वापिस आ गये। आखिरी यह तीसरी चाल चल गई। तुम्हें इस कोठरी में बन्द कर देंगे। बाकी काम भूख-प्यास ही कर देगी।" अपने भाई से उस दुष्टा ने सच कह दिया।

फिर मालिनी और चोर ने दरवाज़े पर ताला लगा दिया।

अब प्रमोदक के वह सींग काम आया, उसने उसमें फूँका। इतने में उस कमरे के किवाड़ टुकड़े-टुकड़े हो गये। शेर, चीता और भालू अन्दर आये। भालू ने उसके हाथ की जंजीरें खोल दीं। शेर और चीते ने सारा घर छान डाला, जो छुपे हुए थे और भाग रहे थे, उन सबको मार दिया। माल्लिनी और उसका प्रियतम चोर भी उनके हाथ मारे गये। प्रमोदक को जिस भालू ने विमुक्त किया था, उसके देखते-देखते उसकी जगह एक सुन्दर स्त्री खड़ी हो गई।

"कौन हो तुम? क्या आश्चर्य है यह?" प्रमोदक ने उससे पूछा।

"मेरा नाम माधवी है। बाकी विवरण हमारे लोग दे देंगे।" उसके कहते ही चीता और शेर वहाँ आये। वे माधवी को बड़े प्रेम से सहलाने लगे। माधवी ने उनसे कहा—"इस शेर और चीते को अपनी तलवार से काट दीजिये।" यह सुनकर माधवी, माल्लिनी से भी अधिक क्रूर दिखाई दी।

माधवी ने उसके सन्देह का अनुमान करके, हँसकर कहा—"ये दोनों मेरे माँ
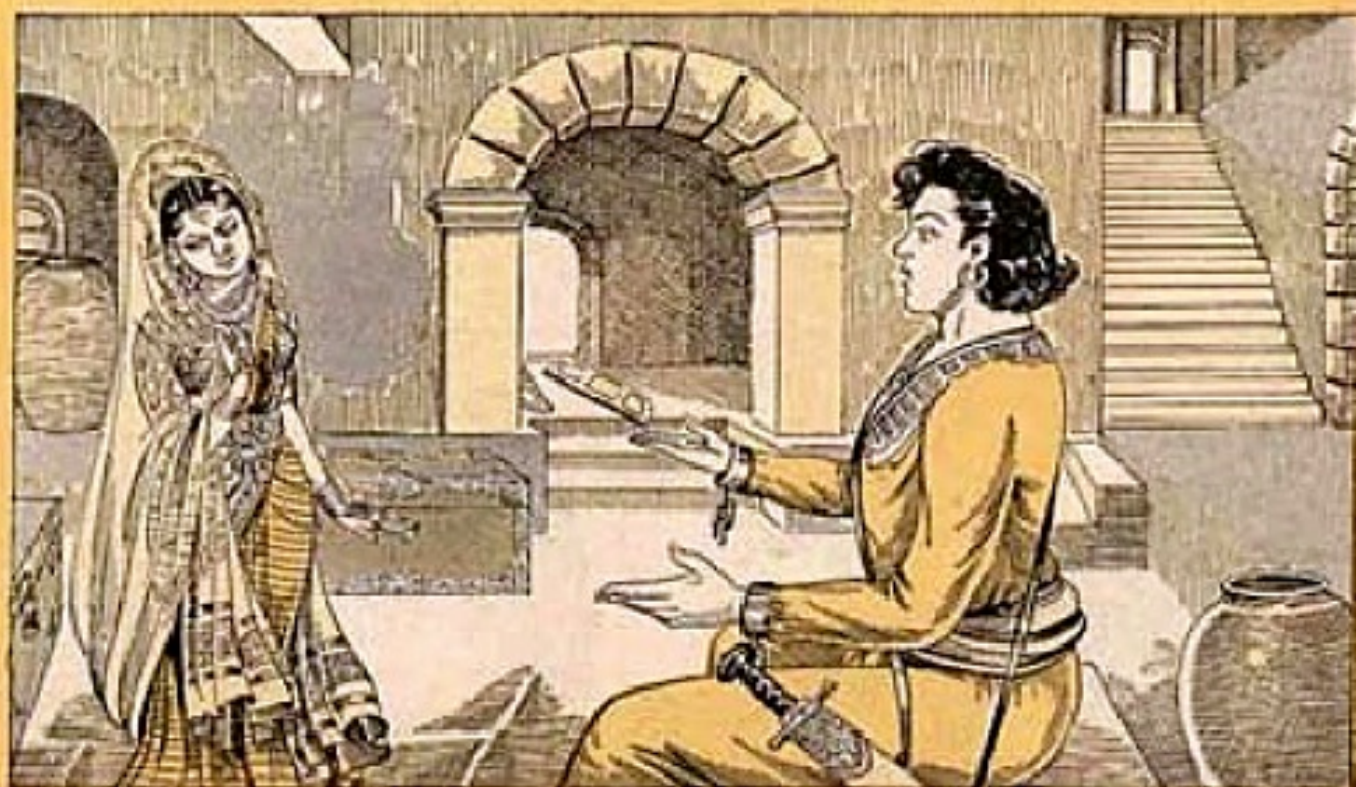
बाप हैं। मेरी तरह शापग्रस्त हैं। यदि आपने उनको काट दिया, तो वे भी शाप से विमुक्त हो जायेंगे।"

प्रमोदक फिर न हिचका, अपनी तल्वार लेकर, एक ही चोट से शेर और चीते को उसने मार दिया। उन दोनों की जगह राजा रानी प्रत्यक्ष हुए। राजा ने इस प्रकार कहा—

"बेटा, मैं शूरदेश का राजा हूँ। एक दिन मैं, अपनी पत्नी, दो साल की इस लड़की के साथ लाल पहाड़ के प्रान्त में भ्रमण के लिए गया। वहाँ जाकर, मैंने एक मुनि का मखौल किया। वह मुनि क्रुद्ध हुआ और हमें शाप देकर, उसने हमें पशु बना दिया। जब मैंने पाँव पड़ कर क्षमा माँगी, तो उसने कहा कि जो हमें देखकर डरेगा नहीं उसके हाथ हम शाप विमुक्त होंगे और कहा कि यदि मेरी लड़की ने कभी किसी से प्रेम किया, तो वह अपने वास्तविक रूप में आ जायेगी। शायद मेरी लड़की ने तुम से प्रेम किया होगा, इसलिए वह अपने रूप में आ गई है। जब तक तुम्हारे हाथ की चोट हम पर न लगी, तब तक शाप से विमुक्त न हो सके।" यही हमारी कहानी है।

फिर शूर देश का राजा, अपनी पत्नी, लड़की, प्रमोदक को साथ लेकर, अपने देश गया। मन्त्री, जो तब तक उसके राज्य की देखभाल कर रहे थे, उसको वापिस आया देख, बड़े खुश हुए। प्रमोदक ने माधवी से विवाह किया। फिर उसने कोशल के साथ शूर देश पर भी राज्य किया।

रत्नवती की कथा

सौराष्ट्र के वल्भी पट्टण में गृहगुप्त नामक एक रईस रहा करता था। वह जहाज़ों का व्यापार किया करता था। उसके रत्नवती नाम की लड़की थी। मधुमती नगर के वासी बलभद्र से, जो व्यापारी था, उसका विवाह किया गया। परन्तु विवाह की पहिली रात ही वह रत्नवती से रूठ गया और चला गया। बहुत से मित्रों ने उसे मनाया, पर वह पत्नी के साथ रहने को नहीं माना।

उन पत्नियों की, जो पतियों द्वारा छोड़ दी जाती हैं, जो हाल्त होती है, वही हाल्त रत्नवती की भी हुई। उसे उसके माँ बाप ही हल्की नज़र से देखने लगे। एक दिन उसको एक बूढ़ी योगिनी दिखाई दी। वह पूजा के फूल ला रही थी। उसको देखकर रत्नवती फूट फूटकर रोने लगी। बुढ़िया ने उसको आश्वासन देकर कहा—"क्यों रो रही हो! क्या कारण है!" रत्नवती ने सब कुछ बताकर कहा—"वह पत्नी मृतवत है, जो पति द्वारा छोड़ दी जाती है। इसका मैं स्वयं उदाहरण हूँ। मेरी माँ तक भी, औरों के तो कहने ही क्या, मुझे हल्की नज़र से देखती हैं। या तो उन्हें मुझे प्रेम की दृष्टि से देखने के लिए कहो, नहीं तो मैं प्राण छोड़ दूँगी। मगर जब तक मैं मर न जाऊँ तब तक यह बात किसी से न कहना।"

योगिनी की आँखों में भी तरी आ गई। उसने रत्नवती का आलिंगन करके कहा—"बेटी, यह दुस्साहस न करो। यदि तुम्हें जीवन से विरक्ति हो गई हो,

तो मेरे साथ तपस्या करो। यदि तुम्हारे पति को मनाने का कोई रास्ता होगा, तो मैं भरसक प्रयत्न करूँगी।"

"स्त्री को पति से अधिक क्या चाहिए! कोई ऐसा उपाय करो कि मेरा पति मुझे मिल जाये। हमारे घर के पास ही निधिदत्त नाम का व्यापारी रहता है। वह कुलीन है। राजा के आदर का पात्र है। उसकी पुत्री कनकवती बिल्कुल मेरी तरह ही है। मेरी सहेली है। मैं उससे भी अधिक गहने पहिनकर उसके साथ उनके घर की छत पर घूमूँगी। तब तुम आना। कहना कि उसको उसकी माँ बुला रही है, उसे छत से भिजवा देना। तब जैसे भी हो, घर के नीचे मेरे पति को लाना। मैं गेंद इस तरह नीचे फेंकूँगी, जैसे गल्ती से गिर गई हो। तब तुम उनसे कहना कि मैं कनकवती हूँ और उनसे गेंद मुझे देने के लिए कहना। फिर जैसे भी हो मैं उनको वश में कर लूँगी।" रत्नवती ने बूढ़ी योगिनी से कहा।

बुढ़िया ने अपना काम निर्विघ्न रूप से करना शुरु किया। बलभद्र, निधिदत्त के घर आया। उसने घर की छत पर गेंद

खेलती अपनी पत्नी को नहीं पहिचाना। उसने उसे कनकवती ही समझा। बुढ़िया के कहने पर नीचे गिरी गेंद को उसने उसको ले जाकर दी। उसी समय रत्नवती ने उसका आलिंगन किया। बलभद्र उससे इतना आकर्षित हुआ कि उसी दिन रात को अपना सारा धन लेकर रत्नवती के साथ एक और देश चला गया।
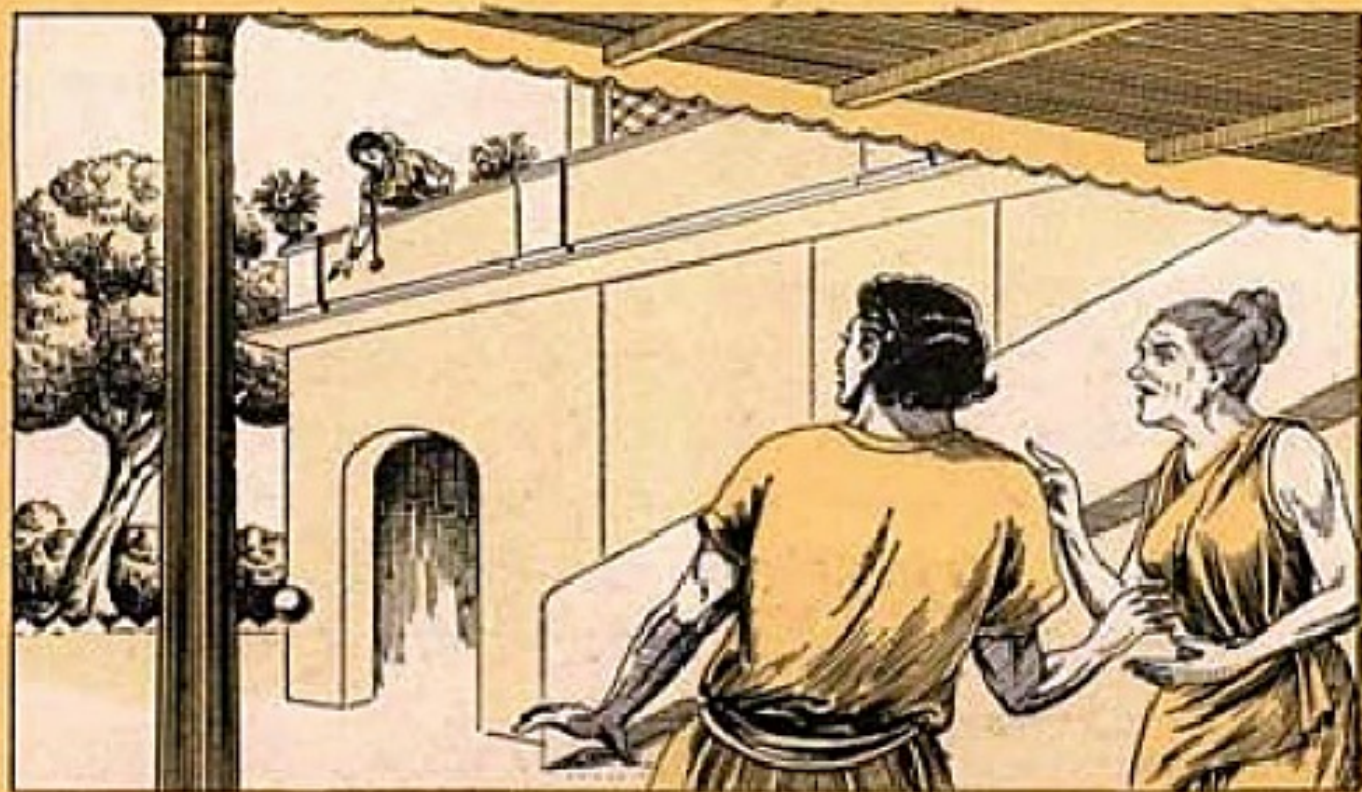
अगले दिन गृहगुप्त के घर हो हल्ला मचा। रत्नवती कहीं न दिखाई दी। जब सब यों चिन्तित थे, तब योगिनी ने आकर कहा—"कल आपके दामाद ने मेरे पास आकर जो कुछ उसने किया था, उसके लिए पश्चात्ताप प्रकट किया। उसने सब के सामने अपनी पत्नी के साथ रहने में लज्जा व्यक्त की, इसलिए वह उसे लेकर एक और देश चला गया होगा। सत्य शीघ्र ही मालूम हो जायेगा। यह सुन वे सन्तुष्ट हुए और उन्होंने रत्नवती को खोजना बन्द कर दिया।

रत्नवती ने रास्ते में एक दासी तय कर ली। आवश्यक चीज़ें उससे ढुवाकर अपने पति के साथ खेतक नामक जगह पर गई। वहाँ बलभद्र ने व्यापार में खूब

चतुराई दिखाई और जल्दी ही धनी हो गया।

एक दिन रत्नवती ने अपनी दासी को खूब डाँटा फटकारा—"एक काम ठीक तरह नहीं करती हो। जो कुछ दिखाई देता है, उसे ले लेती हो। जब पूछती हूँ, तो ऊँटपटांग जवाब देती हो।" उसने उसको दो चार बार पीटा भी। दासी को गुस्सा आ गया और जो रहस्य वह जानती थी, उसने उसको अस्त्र के रूप में बरता। उसने कोतवाल के पास जाकर कहा—"यह बलभद्र वल्भी नगर के निधिदत्त की कनकवती को चोरी चोरी उड़ा लाया है।"

कोतवाल को धन का बड़ा लालच था। बलभद्र से धन लेने का उसे अच्छा मौका मिला। उसने पाँच दस बड़े लोगों को बुलाकर जो कुछ दासी ने कहा था, बताया। "इसका सारा धन ले लेंगे। आप कोई आपत्ति न करना।"

यह बात पता लगते ही, बलभद्र को डर लगा। उसको डरता देख, रत्नवती ने कहा—"आप क्यों डरते हैं? आप बड़े लोगों के पास जाकर कहिये कि मैं गृहगुप्त की लड़की रत्नवती हूँ और हम दोनों का विधिवत् विवाह हुआ है। अगर चाहें तो वे वल्भी नगर भेजकर यह मालूम कर लें। इसमें कोई खतरा नहीं है।"

बलभद्र ने यह ही बड़ों के सामने कहा। उन्होंने वल्भी नगर को एक आदमी भेजा। उस आदमी के साथ गृहगुप्त स्वयं आया। उसने अपनी लड़की और दामाद को पहिचान लिया। बड़ों के सन्देह का निवारण किया। लड़की और दामाद को वह अपने साथ घर ले गया।

अन्तरात्मा

गंगा नदी के किनारे बाबूलाल कभी चक्की लगाकर, अपना जीवन निर्वाह किया करता था। गाँव के लोग ही नहीं, आस-पास के लोग उसकी चक्की में आटा वगैरह, पिसवाकर ले जाते। बाबूलाल जो मर्जी पैसे न लिया करता। जो कुछ पिसवाया जाता, उसका दसवाँ हिस्सा, मजदूरी के रूप में लिया करता। परन्तु इस तरह दसवाँ हिस्सा लेते, बाबूलाल को तसल्ली न हुई। उसने जल्दी ही रईस होने की ठानी।

बाबूलाल के पास जो आया करते थे, उनमें एक बड़ा किसान भी था। दस पन्द्रह दिन में, वह एक बार आता और कुछ बोरे गेहूँ के डालकर चला जाता।

एक दिन उस बड़े किसान ने कुछ बोरे लाकर डाले। उसके जाने के बाद, बाबूलाल को एक बात सूझी। अगर इससे मैंने दसवें हिस्से से कुछ अधिक लिया, तो क्या वह देखने आयेगा? इतना गेहूँ है, उसको क्या मालूम होगा? बाकी चक्कीवाले, इसतरह कर करके पैसेवाले हो गये हैं। मैं भी क्यों न बनूँ!"

बाबूलाल ने, उस दिन दसवें हिस्से से कुछ अधिक लेकर, अलग एक परात में रख दिया। पर जब से उसने ऐसा किया था, उसका मन नहीं मान रहा था। क्यों? वह जानता था कि जो कुछ उसने किया था, वह बिल्कुल गलत था। जब उसने ज्यादह लिया हुआ आटा, बाकी आटे में मिला देना चाहा, तब भी उसका मन न माना। वह हिचकिचाता रहा।

सूरजलाल
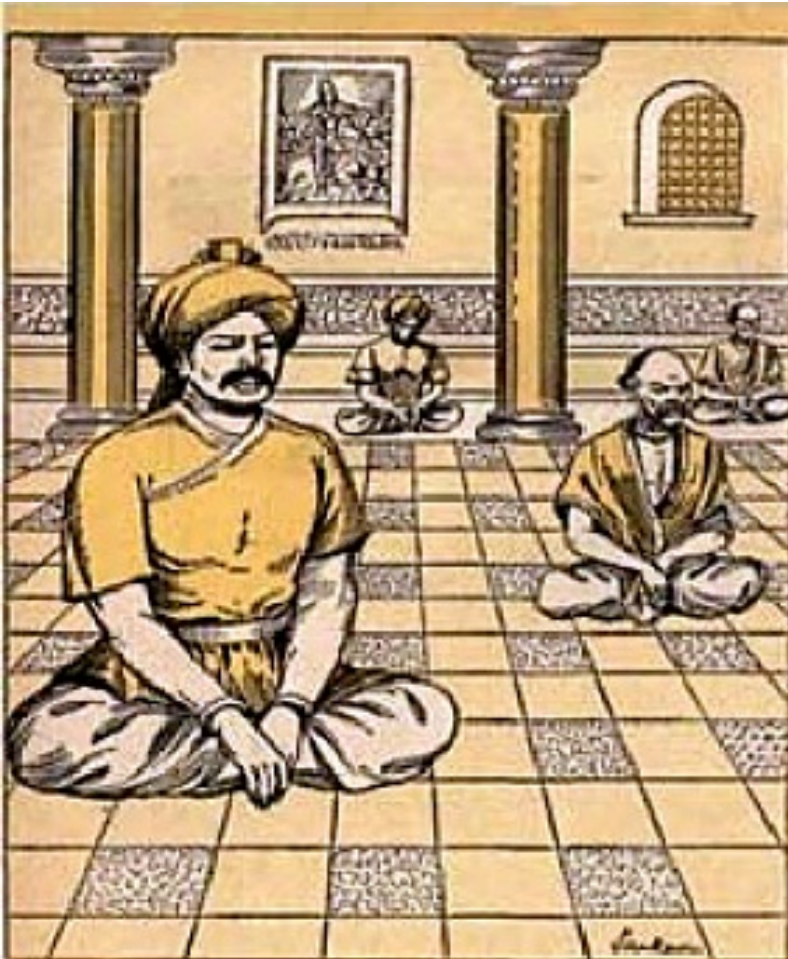
ठीक उसी समय बाबूलाल को एक और बात सूझी। एक गरीब विधवा ने एक बोरा गेहूँ लाकर उसके सामने रखा। वह देख बाबूलाल ने कहा—"यह बड़ी गरीब है। इससे मैं अपने दसवें हिस्से से भी कम लूँगा। गरीबों की सहायता करना पुण्य भी है। जो पाप किया है, वह इस पुण्य के कारण ठीक हो जायेगा। हिसाब बराबर हो जायेगा।"

कुछ दिन बाद बड़े किसान के पास से कुछ और बोरे गेहूँ के आये। इस बार भी बाबूलाल ने अपने दसवें हिस्से से अधिक लिया। हर बार वह उस किसान से अधिक लेता रहा। पर जैसा उस दिन किया था, उस तरह उसने गरीबों से कम न लिया।

इस प्रकार का चुराया हुआ गेहूँ परातों में भरता जाता था, बढ़ता जाता था, पर मन में कम होता जाता था। बाबूलाल बड़ा भक्त था। रोज़ शाम को मन्दिर में पूजा के लिए आया करता। उस दिन जब वह मन्दिर गया, तो दीवारों पर टँगे उसने नीति वाक्य पढ़े। उनमें सबसे पहिला वाक्य था "चोरी न करो।"

पहिले अगर एक तरफ़ चक्की चल रही होती, तो वह दूसरी तरफ़ बैठा अच्छी अच्छी पुस्तकें पढ़ा करता। दोस्तों से बातचीत किया करता। यदि कोई कहता कि फलाने को फलाना चोरी करने पर इतनी सज़ा हुई है, तो वह बड़े ध्यान से सुना करता और अगर अब ऐसी कोई बात उठती, तो सुना ही न करता।

मन्दिर के रास्ते में ही जेल थी। उस जेल की खिड़कियों की ओर वह देखता। उसके अन्दर रहनेवाले कैदी किस किस अपराध पर वहाँ लाये गये थे, वह सोचा करता।

इस प्रकार बाबूलाल के मन में प्रति दिन अपराध की भावना बढ़ती गई।

जब उसने उस बड़े किसान के पास जाकर यह कहने की सोची—"हुज़ूर मैंने यह गलती की है। माफ़ करें...." तो वह उसके पास जाने की हिम्मत न कर सका। उसके पास से चोरी का लिया हुआ आटा भी वह पास न रखना चाहता था। क्या किया जाये? इस दुविधा से बचने का बाबूलाल को एक उपाय सूझा।

हर पन्द्रहवें दिन बड़ा किसान गेहूँ के बोरे लेकर चक्की के पास आया करता। यानि, उसको तब तक बाबूलाल पर किसी प्रकार का सन्देह नहीं हुआ था। इसलिए बाबूलाल ने पहिले की तरह दसवाँ हिस्सा ही लेना प्रारम्भ किया।

उसने कुछ न लेने की भी सोची। ऐसा करने से उसको आटा अधिक दिखाई देता और वह पकड़ा जा सकता था। तब बाबूलाल ने क्या करना शुरु किया? धीमे धीमे एक एक बोरे से उसने जितना लिया था, उतना उतना नाप तोलकर उसमें भरता आया। इस तरह करने से किसान का ऋण चुक

जाता और उससे माफ़ी माँगने की भी ज़रूरत न रहेगी—यह बाबूलाल का ख्याल था। वह हिसाब करता गया और जब तक वह पूरा न हो गया, वह वैसा ही करता गया।

इस तरह उसने अपने मन को तो हल्का कर लिया था और अगर उसको मालूम होता कि उधर किसान के खेत में क्या हो रहा था, तो उसका दिल बैठ जाता।
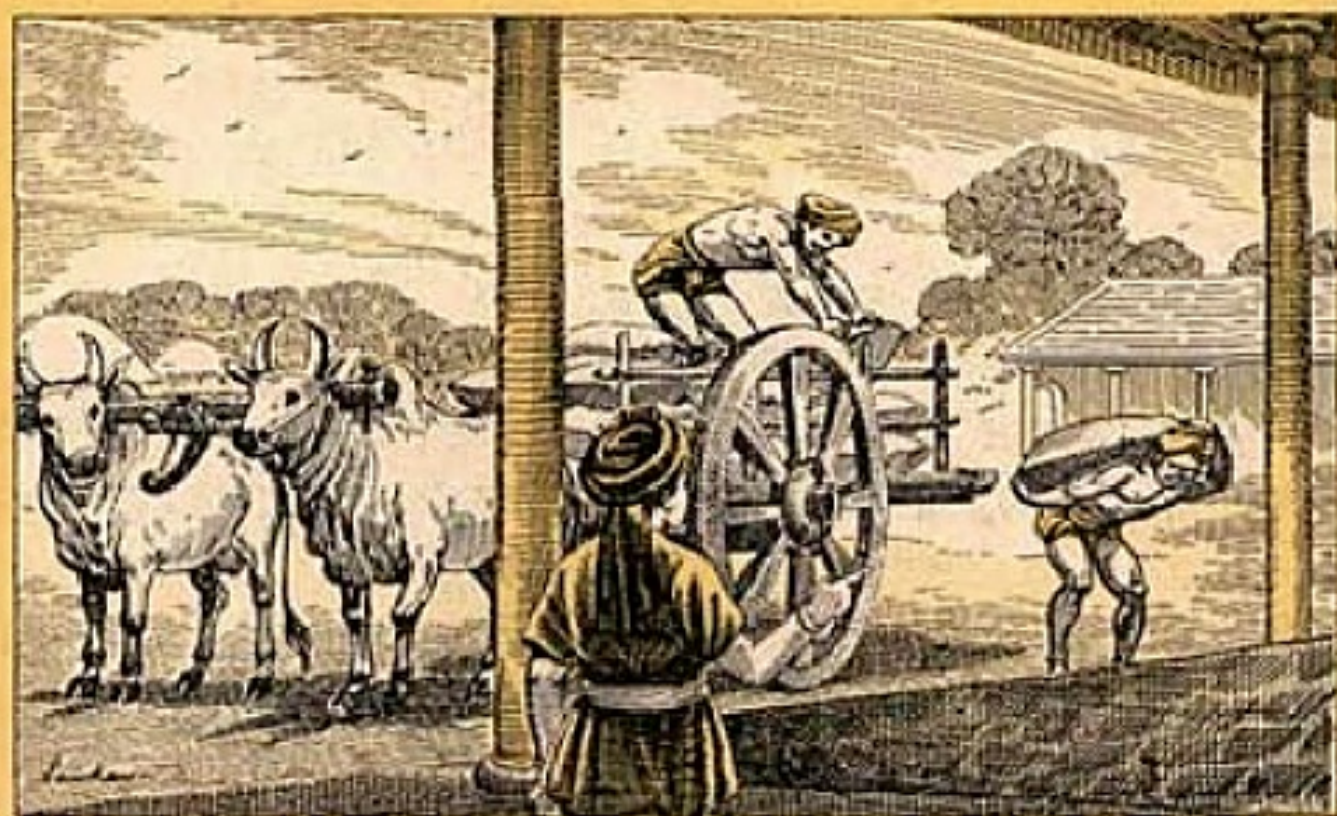
किसान की पत्नी बड़ी अक्लमन्द थी। जो कुछ आटा चक्की से आता, वह उसे तोलकर कई बार देखती। उसने देखा कि आटा घट रहा था—आखिर वह अपने पति से पूछ ही बैठी।

"नहीं, वह तो ऐसा आदमी नहीं है। मैं तो उसके बाप दादा को जानता हूँ।" किसान ने हँसते हुए कहा।

इस पर उसने कहा—"खैर, अच्छा हो तो हो, फिर भी हम जो गेहूँ भेज रहे हैं, और आटा पा रहे हैं, उसको तोल लेना अच्छा है।" किसान ने वैसा ही करने के लिए कहा।

इसबार उसने गेहूँ तोल कर भेजे। और आटे के आते ही उसे भी तोला। तब आटा कम होने की अपेक्षा अधिक था। उसे आश्चर्य हुआ। किसान ने और ज़ोर से हँसते हुए कहा—"मैंने कहा था न!" नहीं, जब तक फिर नहीं तोल लेती तब तक सच नहीं मालूम होगा!

और उधर, बाबूलाल न अधिक ले रहा था, न कम ही, इसलिए मन ही मन खुश था। और चूँकि अब आटा ठीक आ रहा था, इसलिए किसान की पत्नी को और किसान को सन्देह सताने लगा।

एक दिन किसान ने भोजन करते समय पत्नी से कहा—"आश्चर्य होता है, जैसा कि तुमने कहा था, पहिले कम आटा आता रहा, फिर ज्यादह, और अब बिल्कुल ठीक। शायद बाबूलाल के बट्टों में कोई फर्क है। कल एक बार उसके पास जाकर देखूँगा। इस तरह की गल्ती नहीं जारी रहनी चाहिए।"

"यही मैं भी तो कह रही हूँ। तीन चार बार आटा घटा। और दो बार ज्यादह आया, यह आपने खुद अपनी आँखों देखा है। और अब क्यों ठीक है! मैंने झूँठी नहीं कहा है।"

अगले दिन बड़ा किसान चक्की के पास गया। उसे देखते ही बाबूलाल घबरा गया। ठीक तरह नमस्ते भी न कर सका।

"क्यों आया हूँ जानते हो न बाबूलाल!" किसान ने कहा।

बाबूलाल ने कुछ न कहा।

"पिछली बार क्या तुमने अपना आटा तोला था?" किसान ने पूछा।

"जी हाँ, तोला था।" बाबूलाल ने दबी आवाज़ में कहा।
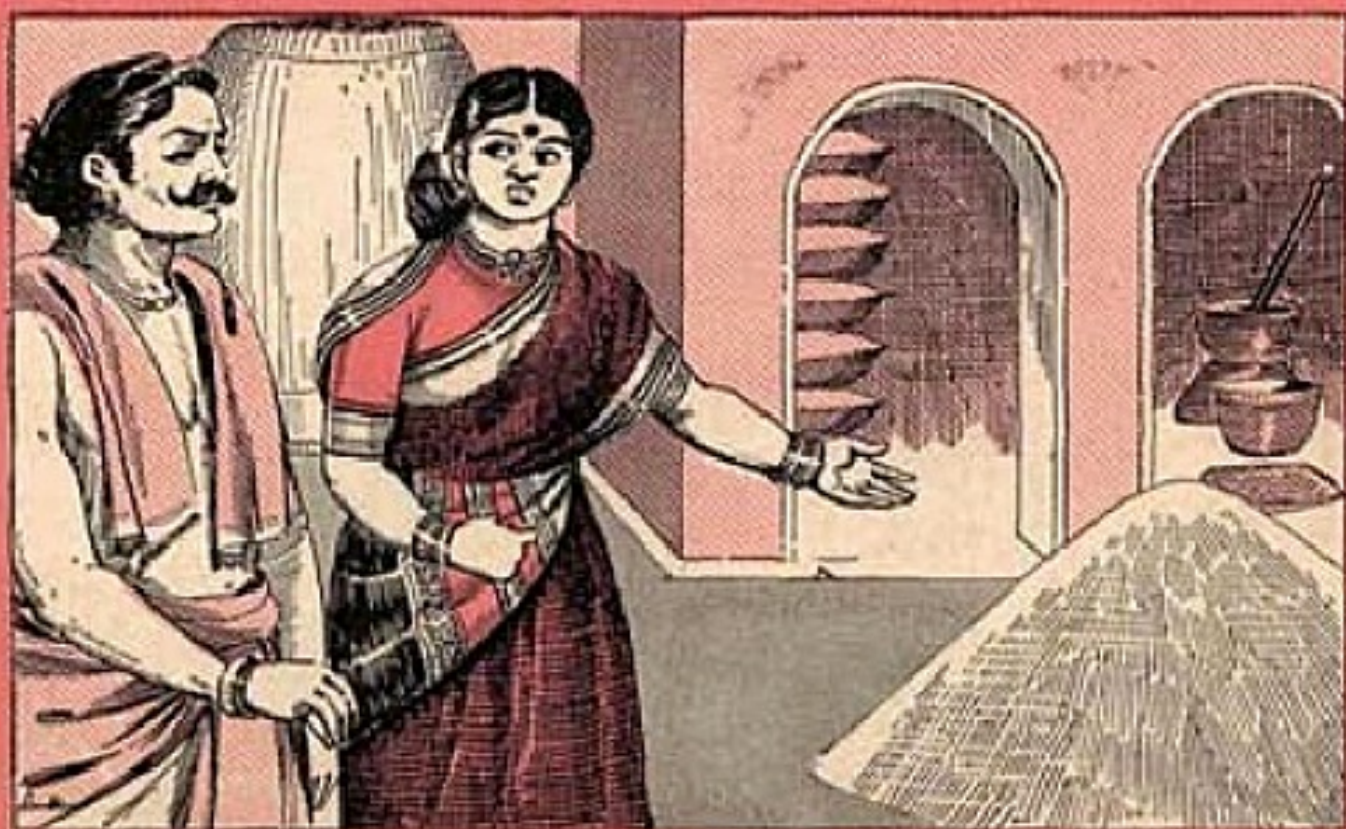
"तो, आटा क्यों ज्यादह हो गया था? मैंने तुमसे पहिले ही कहा था कि तुम्हें यूँहि मुफ्त हमारे लिये नहीं पीसना होगा।"

बाबूलाल का चेहरा फीका पड़ा। किसान जान गया कि वह कुछ कहने में सकुचा रहा था।

"यह देखो बाबूलाल। हम तुम्हारे बाप-दादाओं के ज़माने से तुम्हारी चक्की में आटा पिसवा रहे हैं। क्या बात है, तुम हमें सच बताओ कोई बात नहीं।" किसान ने कहा।

उसने दबी आवाज़ में कहा—"हुजूर, मैंने रईस होने के लिए चोरी की। फिर मैंने की हुई गल्ती सुधारने की कोशिश की। मैंने जो कुछ आपकी गेहुँओं में से लिया था, वह उस परात में है, जब तक मैं उसे आपको न सौंप दूँगा, तब तक मुझे मनः शान्ति न होगी।" बाबूलाल बड़े किसान के सामने बिलखा।

इस पर किसान ने कहा—"माल के कम होने पर कौन रोता है? यह मेरी बात है, इसलिए कोई बात नहीं, जो हुआ है, उसे जाने दो। इससे तुम एक सबक सीखो। यह बात केवल मेरी पत्नी ही जानती है। वह किसी से न कहेगी। इसलिए न घबराओ। यह भी न सोचना कि इस कारण तुम पर मेरा विश्वास कम हो गया है।" ....यूँ कहकर उसने बाबूलाल को समझाया।

बाबूलाल जो कुछ गेहूँ उसके पास बच गये थे, उसे पिसवाकर किसान के पास भिजवा दिये। तब से बाबूलाल फिर से छाती तानकर चलने लगा। अब जब कभी मन्दिर में वह नीति वाक्य पढ़ता तो उसे कोई डर न लगता।

वनदेवी

विक्रमार्क ने हठ न छोड़ा। वह पेड़ के पास गया, पेड़ पर से शव को उतारकर, कन्धे पर डाल हमेशा की तरह चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजा, देवता तक अपने निश्चय पर दृढ़ नहीं रहते, इसलिए कहना होगा कि तुम्हारा दृढ़ निश्चय बड़ा प्रशंसनीय है। यह दिखाने के लिए कि देवता चपलचित्त होते हैं, तुम्हें केतकी वनदेवी की कहानी सुनाता हूँ।" उसने यों कहानी सुनानी शुरु की।

चिन्तामणि नामक राजा के शूरसेन नाम का लड़का था। जब वह सब विद्याओं में पारंगत हो गया, तो उसके माँ-बाप उसके विवाह के बारे में सोचने लगे। परन्तु शूरसेन ने उनसे कह रखा था कि

वह केतकी नगर की राजकुमारी सुनन्दनी से प्रेम करता था और उसी से ही विवाह करना चाहता था।

उसी समय खबर मिली कि सुनन्दिनी के विवाह के लिए स्वयंवर की व्यवस्था की जा रही थी। उस स्वयंवर में भाग लेने के लिए शूरसेन भी निकला। वह केतकी नगर के पास के केतक के जंगल में घुसा और जब वह घोड़े पर सवार हो अपने लोगों से आगे जा रहा था तो उसको केवड़े की झाड़ियों के बीच में रास्ते को रोके एक स्त्री दिखाई दी, जो अप्सरा-सी थी।

"कौन हैं आप? मुझे रास्ता दीजिये।" शूरसेन ने कहा।

इस पर उस स्त्री ने उसको आपाद मस्तक देखते हुए कहा—"मैंने यह कल्पना भी न की थी कि मानवों में तुमसे सुन्दर होंगे। मैं तुम पर मुग्ध हूँ। मुझसे गन्धर्व विवाह कर लो और हमेशा के लिए मेरे साथ इस वन में रह जाओ। मैं तुम्हें देवत्व प्रदान करूँगी।"

"मुझे मानव ही रहने दो। वह देवत्व भी कितने दिन रहेगा, जो किसी का दिया हुआ होता है!" शूरसेन ने जवाब दिया।

वनदेवी ने उसे तरह तरह से मनाया। पर वह न माना। आखिर उसे गुस्सा आ गया। "तुम जिसके प्रेम में मुझे हल्की नज़र से देख रहे हो। उस स्त्री के छूते ही तुम घोड़े हो जाओगे। यह मेरा शाप है।" वह यह कहकर अदृश्य हो गयी।

वनदेवी के शाप से शूरसेन हताश हो गया। उसने स्वयंवर में न जाकर, वापिस घर जाने की भी सोची। पर उसके लिए क्या कारण दिया जाय? जब उसे कुछ न सूझा, तो वह वहीं खड़ा रहा और इतने में उसके लोग उससे आ मिले। उसने उनसे वनदेवी के बारे में कहना भी न चाहा। इसलिए वह उनके साथ केतकी नगर पहुँचा। स्वयंवर के लिए आये हुए और राजकुमारों के साथ उसके रहने आदि, का प्रबन्ध किया गया।

स्वयंवर के दिन शूरसेन उन लोगों में न बैठा, जो स्वयंवर में शामिल होने आये थे, परन्तु अतिथियों के बीच बैठा। किन्तु सुनन्दिनी ने सब को छोड़ दिया और आकर उसने उसके गले में ही माला डाली।

अब शूरसेन के सामने बड़ी समस्या थी। उसने सुनन्दिनी से एकान्त में बात करनी चाही। इसके लिए भी व्यवस्था की गई। तब उसने केतकी देवी के बारे में सब कुछ बताया। "हमारा विवाह अवश्य निरर्थक होगा। इसलिए विवाह से पहिले किसी बहाने किसी और को पति बना लो तो अच्छा होगा।

"मैंने तुम्हें पति कभी ही बना लिया था। भविष्य में क्या होगा, यह तो कोई भी नहीं जानता है। अगर मालूम भी हो गया, तो क्या उस कारण निश्चय बदल जाते हैं? क्या सावित्री ने सत्यवान से यह जानते हुए भी कि वह एक वर्ष ही

जीवित रहेगा, विवाह नहीं किया था! आगामी पर भयभीत होकर, आत्मद्रोह करके किसी और को वर बनाना मुझे गँवारा नहीं है।" सुनन्दिनी ने कहा।

उन दोनों का शास्त्रोक्त रीति से विवाह होने लगा। जब दोनों ने पाणिग्रहण किया, तो शूरसेन विवाह पीठिका पर ही घोड़ा हो गया। हो हल्ला मचा। अतिथि भी तुरत कहीं चले गये। सुनन्दिनी ने घोड़े के रूप में बदले हुए अपने पति से कहा—"हमारा यहाँ रहना ठीक नहीं है। आइये, हम आपके देश चलें।" वे दोनों निकले।

वे केतकी वन में कुछ दूर गये थे कि रास्ते में वनदेवी प्रत्यक्ष हुई—"तुम कौन हो? इस घोड़े के साथ कहाँ जा रही हो?" सुनन्दिनी से पूछा।

सुनन्दिनी ने कहा—"यह घोड़ा नहीं, मेरा पति है। किसी देवी ने कुटिल बुद्धि से इनको घोड़ा हो जाने का शाप दिया है।"

"मैं ही वह देवी हूँ। मैं उस पर मुग्ध हो गई थी, मैंने उससे विवाह करने के लिए कहा। यह भी कहा कि देवत्व दूँगी। वह तुम से आकर्षित था, इसलिए उसने मेरी अवहेलना की और अब उसका दण्ड भुगत रहा है।" वनदेवी ने कहा।

सुनन्दिनी ने वनदेवी के पाँव पकड़कर कहा—"मेरे पति को फिर मनुष्य कर दो। मैं तुम्हारे मुख में कभी न आऊँगी। आजीवन तुम्हारी दासी रहूँगी।"

"यह नहीं हो सकता। मैंने तुम्हारी वजह से ही उसको घोड़े का रूप दिया था। मैं तो देवी हूँ, मुझे तुम्हारी सेवाओं की क्या जरूरत है?" वनदेवी ने कहा।

"यही बात है तो मुझे भी घोड़ी बना दो। अब तुम्हारा बदला निफल जाये,

तब उन्हें मनुष्य बना देना। यदि तब वे तुमसे प्रेम करेंगे तो मैं तुम्हारे रास्ते में नहीं आऊँगी।" सुनन्दिनी ने कहा।

वनदेवी ने एक क्षण सोचा। वह शूरसेन को मानव रूप देकर, अन्तर्धान हो गई। शूरसेन पत्नी के साथ अपने घर आया और उसके साथ सुख से रहने लगा।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा— "राजा, वनदेवी ने अपना निश्चय क्यों बदल लिया था? यदि वह सुनन्दिनी को घोड़ी बना देती और शूरसेन को मनुष्य बना देती तो उसका काम बन जाता न? यह न करके, वह क्यों शूरसेन को मनुष्य बनाकर चली गई? इसलिए कि वह वस्तुतः मुग्ध नहीं थी? या इसलिए कि सुनन्दिनी को देखकर उसको दया आ गई थी? इन सन्देहों का तुमने जान बूझकर उत्तर न दिया तो तुम्हारा सिर टुकड़े टुकड़े हो जायेगा।"

इस पर विक्रमार्क ने कहा—"वनदेवी का शूरसेन को छोड़कर चले जाने का कारण यह नहीं था कि वह उसको नहीं चाहती थी, न इसलिए कि उसको सुनन्दिनी पर दया आ गई थी। एक मानव स्त्री जब किसी से प्रेम करती है, उसके लिए बड़े सा बड़ा त्याग करती है, यह देख देवी ने सोचा कि उसे किसी रूप में कम व्यवहार नहीं करना चाहिए। उसने अपने जाति के अभिमान में शूरसेन को छोड़ दिया।

राजा का इस प्रकार मौन भंग होते ही, बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया और पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

जलदान

विन्ध्य प्रान्त में एक किसान रहा करता था, उसकी एक गंगा नाम की लड़की थी। वह बचपन से, बकरी भेड़ों को चराती, जहाँ वे जातीं, वहाँ जाया करती। सवेरे से शाम तक यूँ घूम घामकर घर पहुँचा करती।

एक दिन गंगा को एक विचित्र पौधा दिखाई दिया। वह उस जगह था, जहाँ भेड़ बकरियाँ चरा करती थीं। यह देख कि यदि वह वहाँ रहा, तो नहीं बचेगा, गंगा ने उसको उठाकर, कुछ ऊंचाई पर, जहाँ पत्थर थे, रखा। वह रोज कुछ दूर के तालाब से पानी लाकर उसे देती।

वह पेड़ जल्दी ही बड़ा हो गया। उसके नीचे घनी साया रहती। उसकी टहनियों पर कितने ही पक्षी निवास करते। गंगा अपनी भेड़ बकरियों को उसी पेड़ के नीचे लाती और वहीं विश्राम किया करती और जब धूप ज्यादह होती, तो आस पास चरानेवाले सब उस पेड़ के नीचे आकर सोते।

गंगा के लगाये हुए पेड़ के पास का तालाब, आस पास के गाँवों के लिए पानी का आधार था। गरमियों में भी उसमें पानी रहता। गरमियों के आते ही, वहाँ के लोग तालाब में गढ़े खोदते और उसमें से निकले पानी को अपने प्राणों की तरह देखते। यदि वह तालाब सूख जाता, उनको पानी की सुविधा न रहती।

एक वर्ष वर्षा नहीं हुई। इसलिए वह तालाब उतना नहीं भरा, जितना कि हर साल भरा करता था। फिर जोर की गरमी

पड़ी, तालाब सूख गया। पेड़ पौधे सूखने लगे। घास भी सूख गई और पशुओं को चारा तक नहीं मिला। लोग पानी के लिए छटपटाने लगे। कई दूर जगह जाने लगे।

एक दिन दुपहर को गंगा अपने लगाये पेड़ के पास गई। उसे डर था कि कहीं वह पेड़ सूख न जाय। परन्तु उसके पत्ते हरे हरे थे, पेड़ की साया में सूखे प्राण आ जाते। गंगा प्यासी थी, उसने सोचा कि वह उस पेड़ के नीचे मर जायेगी। उस दिन पानी का एक बून्द तक न देखा था। प्यास के कारण जीभ सूखी जा रही थी। उस पेड़ के नीचे प्राण छोड़ने के लिए वह पैर घसीटती वहाँ आयी थी। पास ही तालाब सूखा सूखा आहें भर रहा था।

तभी गंगा को कुछ भ्रम-सा हुआ। पेड़ की जड़ के पास उसे किसी मनुष्य का मुख यह कहता लगा—"गंगा, तुमने मुझे बहुत समय पानी दिया है। मैं तुम्हें पानी दूँगा। अगर तुमने मेरी एक जड़ ऊपर उठाई, तो तुमको पानी मिल जायेगा। उस पानी को पीकर, जड़ को फिर यथास्थान रख देना। यह भेद तुम किसी से न कहना।"

गंगा को अपनी आँखों और कानों पर विश्वास नहीं हुआ। जब उसने उठकर इधर उधर देखा, तो एक पत्थर से भूमि की ओर जाते एक जड़ को देखा। उसने यथाशक्ति उसको ऊपर उठाया। तुरत जहाँ से जड़ उठायी थी, वहाँ से पानी ऊपर आ गया। गंगा ने पेट भर पानी पीया और जड़ को यथास्थान रख दिया।

इतने में वहाँ एक बूढ़ा आया और प्यास के कारण गिर गया। उसको पानी

देने के लिए गंगा ने फिर जड़ उठायी—"गंगा, तुमने जड़ उठायी, तो तुम्हारे प्राण चले जायेंगे।" पहिले की आवाज ने कहा।

परन्तु गंगा डरी नहीं। उसने जड़ ऊपर उठायी और वहाँ से निकलनेवाले पानी के पास बूढ़े को पहुँचाया। उस पानी को पीते ही उसके प्राण आ गये।

गंगा ने जड़ को यथास्थान नहीं रखा, उसने बूढ़े से कहा—"बाबा, और लोगों को जाकर बताओ कि यहाँ पानी है। मैं जा नहीं सकती हूँ यहाँ से।" बूढ़ा चला गया।

गंगा उस पानी की ओर देखती खड़ी रही। वह पानी रुका नहीं, बाहर निकलता रहा और तालाब की ओर बहता गया। उसने पेड़ की ओर मुड़कर कहा—"तुम्हारी बात न सुनकर, मैंने लोगों की प्राण रक्षा के लिए यह काम किया है। यदि सब ऐसा करने से जीवित रहते हैं, तो मेरे अकेले मर जाने से कोई हर्ज नहीं है। मेरे प्राण ले लो।"

पेड़ के तने में पहिलेवाला मुँह फिर दिखाई दिया। "तुम्हारी परीक्षा करने के लिए मैंने ऐसा कहा था, मैं भला तुम्हारी जान क्यों लूँगा! क्योंकि तुमने कभी मुझे जलदान दिया था, उसके बदले में, मैं यह तालाब भर रहा हूँ। इस प्रान्त में फिर कभी पानी की कमी न रहेगी।" यह कहकर वह अदृश्य हो गया।

उसी प्रकार, पेड़ के नीचे के पानी से तालाब का काफ़ी हिस्सा भर गया। उस पानी से उस प्रान्त के मनुष्य और पशुओं के प्राण बचे।

पानी उबल रहा है

एक गाँव में रंगलाल और रंगवती नाम के पति पत्नी रहा करते थे। रंगलाल बड़ा आलसी था। कोई काम नहीं आता जाता था। कुछ खाकर सारा गाँव घूम आता था। पत्नी उसे खूब दुत्कारती पर वह डाँट को धूल की तरह झाड़ देता।

एक दिन घर में अनाज न था। रंगवती ने खाना नहीं बनाया। रंगलाल ने समय पर आकर भोजन माँगा। रंगवती ने पति को खरी खोटी सुनाई।

"तुम्हें कुछ भी नहीं आता जाता। मैं कैसे यह गृहस्थी चलाऊँगी। अब कुछ भी हो मैं तभी खाना पकाऊँगी जब तुम अनाज लाकर दोगे। अगर तुम अनाज न ला सको तो कम से कम चोरी करके ही लाओ।"

रंगलाल को यह सुनते ही काठ मार गया। "मुझे चोरी करने केलिये कहते हो। वह कितना खराब काम है! यही नहीं, मैं चोरी करना जानता भी नहीं हूँ।"

"यह सब नहीं होगा। जैसा मैं कहूँ, वैसा करो, नहीं, तो यह रही झाड़ू।" रंगवती ने कोने में रखी झाड़ू लेकर रंगलाल को डराया।

रंगलाल ने डरकर कहा—"कहाँ चोरी की जाये और कैसे की जाये, यह भी तुम ही बताओ।"

"दिन के चढ़ने पर लोग खेतों में होंगे। तब तुम किसी घर में घुस जाना और अनाज चुरा ले आना।" रंगवती ने कहा। रंगलाल वैसे ही करने गया। जब वह बहुत देर तक नहीं आया, तो

रेखा दुबे

रंगवती गली में आकर चिल्लायी "पानी उबल रहा है"। रंगलाल अनाज चुराकर चला आया।

वह जिस घर में एक दिन चोरी करता, दूसरे दिन न करता। सिवाय अनाज के जिसकी उसे उस दिन जरूरत होती, वह और कुछ न चुराता।

इस तरह जब कुछ दिन हुए, तो गाँव वाले जान गये कि गाँव में अनाज चुराया जा रहा था। वे चोर को पकड़ने की तैयारी करने लगे।

एक दिन चोरी करने के लिए रंगलाल गाँव के मुखिये के घर गया। अनाज की चोरी करनेवाले को पकड़ने के लिए, लोग वहाँ तैनात थे ही। उन्होंने उसको पकड़ कर खम्भे से बाँध दिया। जब पति बहुत देर तक अनाज लेकर न आया, तो रंगवती गली में आकर चिल्लायी—"पानी उबल रहा है।"

यह सुनते ही रंगलाल जोर से चिल्लाया—"खम्भे से बँध गये हैं।"

मुखिया को कुछ समझ में नहीं आया। उसने पूछा—"यह सब क्या है?"

रंगलाल जो कुछ गुजरा था, उसे बताकर, जोर से रोया। वहाँ जमा हुए लोग, उसकी कहानी सुनकर, हँसते हँसते लोट पोट हो गये।

मुखिया ने रंगवती को बुलाकर कहा—"तुम अपने पति से काम न करवाकर, चोरी करवाती हो।" उसे खूब डाँटा और उसके पति को छुड़वा दिया। तब से रंगलाल को अक्ल आयी और वह भी, औरों की तरह मज़दूरी करके पेट भरने लगा और गौरवपूर्वक जिन्दगी बसर करने लगा।

एक से एक बढ़कर

वज्रनाभ कभी मणिपुर का राजा था। उसका परिपालन आदर्शप्राय था। उसने राज्य में शान्ति तो स्थापित की ही, ऐसी भी व्यवस्था की कि प्रजा को उपद्रव आदि का कोई भय न रहे। इसलिये सभी लोग बुद्धिमान बन गये थे। उसको यह अभिमान था कि किसी और राज्य में, उसकी प्रजा से अधिक बुद्धिमान प्रजा न थी।

एक बार वज्रनाभ का मित्र, जयपुर का राजा, शतध्वज, उसे देखने मणिपुर आया। शतध्वज यह जानना चाहता था कि उसकी प्रजा कहाँ तक सुखी और बुद्धिमान थी। वज्रनाभ ने अपने मित्र का खूब सत्कार किया। शतध्वज ने पूछा—"तुम्हारे शासन के बारे में मैंने खूब सुना है। पर, इसका प्रमाण क्या है?"

"इसके प्रमाण मेरी प्रजा ही है। प्रजा की बुद्धि, ठीक परिशासन के कारण ही बढ़ती है।" वज्रनाभ ने कहा।

"भले ही परिशासन अच्छा हो, पर सब का बुद्धिमान हो जाना असम्भव है। मनुष्यों की बुद्धि में कमी और अधिकता, जन्म से ही आती है। इसमें राजा क्या कर सकता है?" शतध्वज ने कहा।

"यह बात तो असमर्थ कहते हैं। चाहो तो हमारी प्रजा की बुद्धिमत्ता परखलो।" वज्रनाभ ने कहा। "अच्छा तो परखा जाये। बाजी लगाओ। यदि तुम्हारी प्रजा में कोई बेअक्ल निकला, तो मैं अपना राज्य तुमको दे दूँगा। अगर उनकी अक्ल में कमी और अधिकता हुई, तो तुम अपना राज्य मुझे दे देना।" शतध्वज ने कहा।

"बाजी मेरे लिए मुख्य नहीं है। हाँ, अगर तुम चाहो, तो मैं इस के लिए भी तैयार हूँ।" वज्रनाभ ने कहा।

दोनों अपने मन्त्रियों के साथ वेष बदलकर नगर पार करके, उस जगह गये, जहाँ गरीब लोग बसे हुए थे। एक झोंपड़ी के सामने एक गड़रिये को देखकर, शतध्वज ने रुक कर पूछा—"भाई, मैं तुम से कुछ प्रश्न करूँगा। जवाब दोगे?

"सब से अधिक प्रकाशवाली चीज़ क्या है?" शतध्वज ने पूछा।

"सूर्य!" गड़रिये ने कहा।

"कौन-सा पानी सब से श्रेष्ठ है?"

"गंगा जल"

"कैसी निद्रा सब से अच्छी है?"

"वही, जो रात को सोने पर सवेरे टूटे।"

"अक्षय पात्र का क्या अर्थ है?"

"फलवाला परिश्रम।"

"फूलों में क्या श्रेष्ट है?"

"लक्ष्मी का निवास पद्म।"

यह सुन शतध्वज ने कहा—"अच्छे उत्तर दिये हैं।" और गड़रिये के हाथ में कुछ धन रखा। उसी समय हँसता, गड़रिये का लड़का जो पाँच वर्ष का था, बाहर आया।

"क्यों हँस रहे हो?" शतध्वज ने उससे पूछा।

"आपने कुछ पूछा और हमारे पिताजी ने जो मन में आया कह दिया और वही सुनकर सन्तुष्ट हो गये।" लड़के ने कहा।

"तो ठीक उत्तर तुम दो।" शतध्वज ने कहा।

"सब से अधिक प्रकाशवाली चीज़ मेरी माँ की आँखें हैं। आकाश से जो पानी गिरता है, वही अच्छा पानी है।

मेहनती की नीन्द ही अच्छी नीन्द है। हमारी माँ का हाथ ही अक्षयपात्र है। जिससे भगवान की पूजा की जाये, वही अच्छा फूल है।" लड़के ने कहा।

शतध्वज उसकी अक्लमन्दी पर चकित होकर, उसके हाथ में दुगना धन रख रहा था कि, इतने में झोंपड़ी में से, जोर से हंसती गड़रिये की पत्नी आयी। उसने शतध्वज से कहा—"हँसने के लिये माफ कीजिये। उस छोटे की बात सुनकर, आप खुश हो गये। इसलिये आपकी नादानी पर मुझे हँसी आ रही है।"

"क्या तुम उससे अच्छे उत्तर दे सकती हो!" शतध्वज ने आश्चर्य में पूछा।

"क्यों नहीं दे सकती हुजूर! जो प्रकाश शीशे में दिखाई देता है वही श्रेष्ठ प्रकाश है। सब कष्टों को धोनेवाले आँसू ही सब से अधिक अच्छा पानी है। वही सब से अच्छी नीन्द है, जो थोड़ी-सी आहट पर भी टूट जाये। भूमाता ही अक्षय पात्र है। वही सब से अच्छा फूल है, जो पति पत्नी को लाकर देता है।" गड़रिये की पत्नी ने कहा।

उसके उत्तर सुनकर, खुश हो शतध्वज उसको और भी धन देनेवाला था, कि गड़रिये की माँ हँसती हुई बाहर आई। "इन सब ने आपके प्रश्नों का गलत उत्तर दिया है।" उसने कहा।

"तो क्या तुम ठीक उत्तर दोगी?" शतध्वज ने उससे पूछा।

"देती हूँ, सुनिये। घने अन्धकार में चमकनेवाले दीये का प्रकाश ही सब से अधिक अच्छा प्रकाश है। खूब प्यास लगने पर जो पानी पिया जाता है, वही सब से अच्छा पानी है। स्वस्थ को जो नीन्द आती है, वही सब से अच्छी नीन्द है। मनुष्य की बुद्धि से अच्छा अक्षय पात्र नहीं है। सूख जाने पर भी, जो बरसों काम आता है, ऐसा कपास का फूल ही सब से अच्छा फूल है।" गड़रिये की माँ ने कहा।

उनके उत्तरों की अक्लमन्दी और अनुभव देख कर शतध्वज ने अपने गले का हार निकालकर उसको दे दिया।

जब दोनों मित्र महल वापिस चले आये, तो शतध्वज ने वज्रनाभ से कहा— "तुम बाजी जीत गये हो। इस में सन्देह नहीं है कि तुम्हारे राज्य की प्रजा बड़ी अक्लमन्द है। एक छोटी झोंपड़ी में रहनेवाले, छोटे बच्चे से लेकर, बुढ़िया तक ने बड़े सुन्दर ढंग से प्रश्नों का उत्तर दिया।"

"चूँकि उनकी बुद्धिमता में, जैसे कि तुमने कहा था, कमी और अधिकता है, इसलिए तुम बाजी में नहीं हारे हो।" वज्रनाभ ने हँसते हुए कहा।

चिन्तादेवी

"कौन बड़ा है!" एक बार शनि और लक्ष्मी में बात उठी। वे श्रीवत्स राजा से इसका फैसला कराने गईं। "हम दोनों में कौन बड़ी है!" शनि ने श्रीवत्स से पूछा। पूजा मन्दिर में, मैंने जो तुम दोनों के लिए पीठिकायें रखी हैं, वे ही इसका परिचायक हैं।" श्रीवत्स ने कहा। उसने शनि के लिए चान्दी की और लक्ष्मी के लिए सोने की पीठिका रख रखी थी।

शनि को गुस्सा आ गया और उसने श्रीवत्स के राजमहल को दग्ध कर दिया। शनि के प्रभाव के कारण, बाहुदेव नामक शत्रु राजा ने श्रीवत्स के राज्य पर आक्रमण किया। श्रीवत्स को अपनी पत्नी, चिन्तादेवी के साथ राज्य छोड़कर जाना पड़ा। रात श्रीवत्स जहाँ सोया था, उसके नीचे की मिट्टी सोना हो गई। पति पत्नी उससे ईंटें बनाकर, बेचने के लिए निकले।

समुद्र के किनारे एक व्यापारी की नाव लंगर डाले हुए थी। उन्होंने वे सोने की ईंटें, उस व्यापारी को बेचने का निश्चय किया। वे नाव में गये। चिन्तादेवी और सोने को देखकर, व्यापारी को शरारत सूझी। उसने लंगर उठवा दिया। नाव हिली। उसके सैनिकों ने श्रीवत्स को समुद्र में डलवा दिया। चिन्तादेवी को एक कोठरी में डाल दिया गया। इस बीच समुद्र में गिरे श्रीवत्स को शनि किनारे पर ले गई। वह जाकर नगर के बाहर, एक देवालय के समीप बैठ गया।

उसी समय बाहुदेव की लड़की भद्रादेवी का स्वयंवर निश्चित किया गया। वह सहेलियों के साथ मन्दिर में आयी। पूजा

जानकीराम

करके वह जा रही थी कि आलय के पास श्रीवत्स को देखकर उसने कहा कि सिवाय उसके किसी और से वह शादी नहीं करेगी।

श्रीवत्स, अपनी पत्नी को खोजता फिर समुद्र के पास गया। व्यापारी भी छोटी नाव पर किनारे पर आया हुआ था। वह जो कोई दीखता, उसको कहता—"बाबू! मेरी नाव को हिलाकर पुण्य कमाइये।"

श्रीवत्स ने उसे देख कर कहा—"तुम पापी हो। मुझे और मेरी पत्नी को समुद्र में डालकर, मेरा सोना ले लिया। इसलिए ही तुम्हारी नाव हिली नहीं।"

व्यापारी ने श्रीवत्स के पाँव पड़कर कहा—"हुजूर मैंने आपकी पत्नी को समुद्र में नहीं धकेला था। वह एक कोठरी में है। बहुत कोशिश की पर उस कोठरी का दरवाजा नहीं खुल रहा है। आप आकर, हमारी नाव चलाइये।"

श्रीवत्स उसके साथ तमेड़ में गया और चिन्तादेवी के कमरे में गया। उसके दरवाजे पर हाथ रखते ही दरवाजा खुल गया। व्यापारी की नाव चल पड़ी। उसके बाद, श्रीवत्स अपनी पत्नी के साथ समुद्र के किनारे आ गये। इस बीच बाहुदेव, उस व्यक्ति को खोजता समुद्र तट पर आया, जिसको उसकी लड़की ने चुना था, वह जान गया कि वह व्यक्ति वही था, जिसका राज्य उसने अपहरण किया था। बाहुदेव ने श्रीवत्स को उसका राज्य और अपनी लड़की भी दे दी।

कष्टों के बाद श्रीवत्स को सुख और भी सन्तोषदायक लगा और उसने शनि के लिए भी सोने की पीठिका बनवायी। लक्ष्मी और शनि की समान रूप से पूजा करता अपनी दोनों पत्नियों के साथ सुख से रहने लगा।

वह कौव्वा इन्द्र का लड़का था। पक्षियों में श्रेष्ट था। पर्वतों में रहता था। वायु वेग से जा सकता था। ब्रह्मास्त्र जो पीछे पड़ा, तो वह कौव्वा तीनों लोक घूमा। न इन्द्र ही, देवता, महर्षि, आदि भी न रक्षा कर पाये। फिर उसने आकर, राम के यहाँ शरण माँगी। राम चूँकि शरणागत वत्सल हैं, इसलिए उन्होंने उसे माफ़ कर दिया। परन्तु ब्रह्मास्त्र व्यर्थ नहीं जाता। इसलिए उसकी बाँयी आँख जाती रही।

सीता ने हनुमान को यह बात सुनाकर कहा—"इतना समर्थ और पराक्रमी होकर भी, यदि मेरा पति मेरी रक्षा नहीं कर पाया है, तो इसका कारण मेरा महापाप ही है।" हनुमान ने उसको आश्वासन दिया और पूछा कि राम, लक्ष्मण, सुग्रीव, आदि वानर समूह को वह क्या कहना चाहती थी।

"कहना कि मैंने राम का कुशल क्षेम पूछा है। उनको मेरा साष्टाङ्ग कहना। और कहना कि उस लक्ष्मण का क्षेम भी पूछा है, जिसने मुझे माता की तरह माना। यदि वह उस समय पास होता, तो राम मेरा अपहरण नहीं कर पाता। राम को यहाँ लाने के लिए तुम से अधिक कोई समर्थ नहीं है।" कहते हुए सीता ने

आंचल में बंधे चूड़ामणि को निकालकर, हनुमान को देते हुए कहा—"इसे मेरी माँ ने विवाह के समय दिया था। तब महाराजा दशरथ भी वहाँ थे। इसको देखते ही राम को, अपने पिता, मेरी माँ याद हो आयेंगे।"

हनुमान ने तब मामूली रूप धारण कर रखा था। उस चूड़ामणि को वह हाथ में न लगा सका, इसलिए उसने उसे अंगुली में लगा लिया।

हनुमान, जो कुछ सीता को कहना था, कहकर इधर आया। उसने रावण की भी कुछ खबर लेनी चाही। इतनी कठिनाई के बाद लंका आकर, केवल, सीता को देखकर वापिस चले जाना, उसे न भाया उसने सोचा, कि यदि यह मालूम कर लिया गया कि राक्षसों में क्या पराक्रम है, युद्ध में वे कितने पटु हैं, तो सुग्रीव की आज्ञा अच्छी तरह पालन की जा सकेगी और रावण को भी दिखाया जा सकेगा कि वानरों का क्या पराक्रम है। यह सोच कि रावण को क्रुद्ध करने के लिए, अशोक वन को नष्ट करने से अच्छा कोई मार्ग न था, वह अशोक वन के पेड़ उखाड़ने लगा। क्रीड़ा सरोवरों को नष्ट करने लगा। क्रीड़ा पर्वतों को उखाड़ फेंका। सारा अशोक वन बिगाड़ दिया। पेड़ पर बैठे पक्षी, डर से चिल्लाये। बेलें, वगैरह उखाड़ फेंकीं। घर गिर गये। चाहे कितने भी राक्षस आयें, उनसे युद्ध करने के लिए हनुमान बाहर के द्वार पर गया।

हनुमान की ध्वंस क्रिया को देखने, सब राक्षस स्त्रियाँ भागी भागी आयीं। उनको अपनी ओर देखता देख, हनुमान ने, जिसने अपना शरीर पहिले ही फुला रखा था और फुलाया। उन्होंने सीता से

पूछा—"यह कौन है? कहाँ से आया है? किसने भेजा है?" इसने तुमसे क्या कहा था?

"वह कौन है, यह मैं कैसे जान सकती हूँ। राक्षसों की बातें राक्षस ही जान सकते हैं। उसे देखकर मुझे डर लग रहा है। कौन है वह, तुम ही बताओ।" सीता ने कहा।

सीता के यह कहते ही, राक्षस स्त्रियाँ डर गईं। उनमें से कुछ सीता की रक्षा के लिए ठहर गईं, बाकी रावण से कहने भागे। उन्होंने रावण से कहा—"भयंकर देहवाला, अत्यन्त बलवाला, कोई वानर सीता से बात कर गया है। वह इस समय अशोक वन में है। जब हमने पूछा कि यह कौन है, तो सीता हमें नहीं बता रही है। न मालूम उसको किसने भेजा है, पर उसने सारा अन्तःपुर का बाग खराब कर दिया है। कहीं कुछ नहीं छोड़ा। केवल वही पेड़ नहीं उखाड़ा है, जिसके नीचे सीता बैठती थी। सीता एक शिंशुपा वृक्ष के नीचे चली गई है। उसे भी उसने नहीं छोड़ा है। चूँकि उसने अशोक वन को बिगाड़ा है और चूँकि उसने सीता से बातचीत की है—इन्हीं दो अपराधों पर उसको प्राणदण्ड दिया जाना चाहिये।" रावण ये बातें सुनकर क्रुद्ध हुआ उसने अपनी तरह पराक्रमी, अस्सी हजार राक्षसों को, किंकरों को, आज्ञा दी कि वे तरह तरह के हथियार लेकर, अशोक वन के द्वार के पास खड़े हनुमान के पास जायें। उन्होंने जब हनुमान को घेर लिया, तो हनुमान अपनी पूँछ को, ज़ोर से ज़मीन पर पटक कर ज़ोर से चिल्लाया।

"राम लक्ष्मण की जय, वानर राजा सुग्रीव की जय। मैं राम का दास हूँ।

मेरा नाम हनुमान है। शत्रु हन्ता हूँ। हज़ार रावण ही युद्ध में मेरी बराबरी कर सकते हैं। राक्षसों को, देखते देखते इस लंका नगरी को नाश करके, सीता को नमस्कार करके, राम के पास वापिस चला जाऊँगा।" हनुमान जोर से चिल्लाया।

लाल पर्वत की तरह दीखने वाले हनुमान को देख, उसके चिल्लाने को सुन, राक्षस डरे तो, पर चूँकि राजा की आज्ञा का धिकार नहीं हो सकता था, राक्षसों ने उस पर अस्त्रों का प्रयोग किया। हनुमान ने द्वार के पास से लोहे के खम्भे को हाथ में पकड़ा और उससे राक्षसों को और किंकरों को खूब मारा। तब भी हनुमान की युद्ध की इच्छा पूरी न हुई। हनुमान द्वार के पास ही रहा।

इस बीच, कुछ राक्षस भागे भागे रावण के पास गये। उन्होंने बताया कि हनुमान के हाथ सब किंकर मारे गये थे। रावण को गुस्सा आ गया। उसने आँखें बड़ी करके, हनुमान से युद्ध करने के लिए प्रदस्त के लड़के अजेय, जम्बुमाली को आज्ञा दी।

किंकरों को मारकर, जब हनुमान खड़ा था, तो उसको अशोक वन का चैत्य-सा भवन स्मरण हो आया। उसको उसने नाश नहीं किया था। उसे नाश करने के लिए वह चैत्य प्रासाद पर कूदा। उस प्रासाद की रक्षा करनेवाले सौ राक्षस हथियार लेकर, हनुमान पर आये। उनके हथियार जब हनुमान को लगे, तो उसे और गुस्सा आया और उसने अपना शरीर और बड़ा किया। उसने प्रासाद का एक खम्भा उखाड़ा और उसे जब तेजी से घुमाया, तो उसकी गर्मी से आग पैदा हुई और उस

आग के कारण, सारा प्रासाद जल गया। हनुमान ने उस स्तम्भ से ही सौ राक्षसों को मारा।

फिर उसने जोर से गरजते हुए कहा—"मुझ जैसे हज़ारों वानर, सीता को खोजने के लिए सुग्रीव द्वारा भेजे गये हैं। लाखों, करोड़ों, वानरों के साथ सुग्रीव यहाँ आयेगा। तुमने राम से दुश्मनी की है। अब तुम्हारी लंका नहीं रहेगी। नष्ट हो जायेगी। न तुम ही रहोगे। मर जाओगे। न रावण ही रहेगा।"

लाल फूल पहिनकर, सिर पर फूल रखकर, धनुष और सुन्दर बाण लेकर, जम्बुमाली, गधों के रथ में आया, तो हनुमान द्वार पर बैठा था। जम्बुमाली ने कई बाण छोड़कर हनुमान के मुँह और शरीर को घायल किया। जब हनुमान ने बड़े बड़े पत्थर फेंके, तो उसने उन्हें बाण से हटा दिया। जब सागून का वृक्ष फेंका, तो उसके टुकड़े टुकड़े कर दिये। आखिर हनुमान ने उस लोहे के खम्भे को, जिसका उसने पहिले उपयोग किया था, मारा, तब जम्बुमाली, उसके गधे, रथ, सब टुकड़े टुकड़े हो गये।

जब रावण ने सुना कि किंकरों के अलावा, जम्बुमाली भी मारा गया था, तो रावण को बड़ा गुस्सा आया। सात अस्त्र वेत्ता मन्त्री पुत्रों को, हनुमान का मुकाबला करने भेजा। वे अपनी अपनी सेनाओं को लेकर इस होड़ में निकले कि कौन जाकर पहिले शत्रु से लोहा लेता है, उन्होंने जो बाण उस पर छोड़े, उनसे बचता, हनुमान हवा में इधर उधर फिरता रहा और जिन राक्षसों ने उस पर हमला किया, उनको हाथों से, पैरों से मार दिया। वे मरते मरते इतना चिल्लाये

कि सारी लंका ही गूँजने लगी। मन्त्री पुत्र भी जब मारे गये, तो रावण को और डर लगने लगा। परन्तु उसने उसे बाहर न दिखाया। विरूपाक्ष, कापाक्ष, दुर्धर, बुघस, भासकर्ण आदि मुख्य सेनापतियों को बुलाकर कहा—"तुम चतुरंग सेना के साथ जाकर उस वानर को दण्ड दो। वह मुझे वानर-सा नहीं मालूम होता है। शायद किसी इन्द्र ने तपस्या करके इस भूत को हमारे पास भेजा है। मैंने बड़े बड़े महाबलवान वानर, वालि, सुग्रीव, नील आदि को देखा है। पर यह वानर तो उनसे भी बड़ा मालूम होता है। यह वानर रूप में कोई भूत है। जैसे भी हो, तुम्हें इस वानर को पकड़ना होगा। युद्ध करते समय बिल्कुल बेपरवाह न रहना।"

वे पाँचों अशोक वन के द्वार के पास गये। हनुमान को देखकर, उसे चारों तरफ़ से घेरकर, उससे विवाद करने लगे। दुर्धर ने हनुमान के सिर पर पाँच बाण छोड़े। हनुमान ज़ोर से चिल्लाता आकाश में उड़ा। ऊपर से वह ज़ोर से, सीधे जब दुर्धर के ऊपर कूदा, तो उसका रथ, उसमें जुते हुए आठ घोड़े और दुर्धर सब नष्ट हो गये।

दुर्धर जब मर गया, तो विरूपाक्ष, आमाक्ष गुस्से में, आकाश में कूदे। गदाओं से हनुमान की छाती पर मारने लगे। हनुमान ने एक पेड़ उखाड़ा और उससे उन्हें खूब पीटा। तीनों के मर जाने के बाद, बाकी दोनों छुरी और भाले लेकर, हनुमान पर लपके और उसे घायल कर दिया। हनुमान ने एक पर्वत, मय पेड़ जन्तुओं के उखाड़ा, उसे लेकर प्रघन और भास्कर पर फेंका।

एक ही चोट में उन दोनों को भी मार दिया।

इस तरह पाँचों योद्धाओं को मारकर हनुमान ने उनकी सेना का ही उन्मूलन कर दिया। वहाँ के मार्गों में लाशों की ढेरें लग गईं।

यह पता लगते ही रावण की नजर अपने लड़के अक्ष पर पड़ी। पिता का देखना था कि अक्ष झट उठा, सोने से पुता अपना धनुष उठाया, सोने का अलंकृत रथ लेकर, वह हनुमान से लड़ने निकला। उस रथ में हथियार थे, वह युद्ध के लिए सन्नद्ध रथ था। उसके साथ सेना भी निकली।

हनुमान अभी अशोक वन के पास ही खड़ा था। उसे देखते ही, अक्ष जान गया कि वह पराक्रमशाली है। उसने उसको गौरव की दृष्टि से देखा। दोनों में प्रचण्ड युद्ध हुआ। अक्ष लड़का था, पर उसके पराक्रम को देखकर हनुमान भी खुश हुआ। वह अक्ष के बाणों से बचता, आकाश में घूमता सोचने लगा—"इस लड़के को कैसे मारा जाय यह अभी ही इतना पराक्रम दिखा रहा है, न मालूम आगे क्या पराक्रम दिखाये! अभी इसे मार देना अच्छा है।"

अक्ष का रथ, आकाश में भी जा सकता था। जब वह आकाश में था, तो हनुमान ने घोड़ों को हाथ से मार दिया और पहिये तोड़ दिये। रथ जमीन पर गिरा। परन्तु अक्ष, बाण के साथ आकाश में उड़ा। जब वह यों उठा, तो हनुमान ने उसके पैर पकड़ लिए, उसे घुमाकर, जमीन पर फेंककर उसे मार दिया।

वैद्य की सहायता

एक दिन पन्नालाल, एक गली में जा रहा था कि एक घर के सामने खड़े, एक छोटी लड़की ने उसके पूछा—"क्या मेरी थोड़ी-सी मदद करेंगे!"

"ज़रूर करूँगा। क्या चाहिए!" परोपकारी पन्नालाल ने उस लड़की से पूछा।

पास ही चबूतरे पर उस लड़की की माँ लेटी हुई थी। उसे बुखार था। चूँकि पैर कमजोर थे, इसलिए वह उठकर अन्दर भी न जा सकती थी। किसी की मदद लेकर उसको अन्दर पहुँचाना था।

पन्नालाल ने बीमार स्त्री को धीमे से उठाया। अन्दर ले गया। बिस्तरे पर लिटाकर पूछा—"क्या इस बीमारी के लिए दवा ले रही हो!"

"नहीं, बेटा, हम जैसे लोग, कैसे दवा दारु खरीद सकते हैं! बिना दवा के बीमारी खुद ब खुद चली जायेगी।" उस बीमार स्त्री ने कहा।

"तुम्हारे पिताजी कहाँ हैं!" पन्नालाल ने छोटी लड़की से पूछा।

"मेरे पिताजी कस्बे में हैं। सप्ताह में एक बार आते हैं।" लड़की ने कहा।

"अगर दवा न दी गई तो कैसे गुज़ारा चलेगा!" कहकर पन्नालाल वहाँ से वैद्य के घर गया। उस गाँव में, वह अकेला ही वैद्य था। वैद्य के मकान का दरवाजा बन्द था। जब पन्नालाल ने किवाड़ खटखटाया, तो एक लड़के ने किवाड़ खोलकर पूछा। "क्या चाहिए!"

"वैद्य" पन्नालाल अभी कह ही रहा था कि लड़के ने हाथ आगे बढ़ाया। पन्नालाल को यह अभिनय समझ में न आया। उसने पूछा—"क्या चाहिए!"

"क्या तुम नहीं जानते? यदि वैद्य को देखना चाहते हो, तो मेरे हाथ में चवन्नी रखनी पड़ती है। उनसे यदि बात करनी है तो एक और चवन्नी देनी होगी। अगर दवा भी चाहते हो तो दो चवन्नी और दो।" लड़के ने कहा।

पन्नालाल, उसके हाथ में एक चवन्नी रख कर अन्दर गया। उसको देखते ही वैद्य ने हाथ बढ़ाया। पन्नालाल ने उसके हाथ में एक और चवन्नी रखी। पन्नालाल ने जो कुछ कहा उसे सुनकर वैद्य ने कहा—"यदि मुझे आकर रोगी को देखना पड़ा, तो आठ चवन्नियाँ देनी होंगी।" वैद्य को दो रुपये देकर, पन्नालाल उसको साथ लेकर बीमार के पास गया। वैद्य ने रोगी ही परीक्षा की। उसे कुछ भस्म, कषाय आदि देकर, और उन सब के लिए पैसे लेकर, खान पान के बारे में बताकर चला गया।

रोगी ने पन्नालाल से कहा; सिवाय धनियों के कोई भी इस वैद्य के पास नहीं जा सकता। क्यों फिजूल रुपया खर्चते हो?

"यह क्या कह रही हो? बीमारी के लिए दवा लानी होगी, जो कुछ खर्च होगा मैं दूँगा।" कहकर पन्नालाल ने स्वयं कषाय आदि तैयार किया। उसे रोगी को पिलाया। यह काम खतम होने के बाद वह अपने घर चला गया।

फिर पन्नालाल अपनी पत्नी मीनाक्षी को लाया और उसने उसे रोगी की सेवा शुश्रूषा करने के लिए कहा। फिर जब दो बार वैद्य आया और उसने पन्नालाल और उसकी पत्नी को, रोगी की सेवा करते देखा, तो उससे पूछा—"तुम्हारा और रोगी का क्या सम्बन्ध है?"

"वह मनुष्य है, और मैं भी मनुष्य। इससे बड़ा और कोई सम्बन्ध नहीं है।" पन्नालाल ने कहा। वैद्य ने सोचा कि पन्नालाल और उसकी पत्नी नादान थे, और वे गाँववालों के लिए व्यर्थ पैसा खर्च रहे थे।

चार दिन बाद बीमारी कुछ कम हुई। पन्नालाल फिर वैद्य के घर गया। वैद्य अपने घर चिन्तित-सा बैठा था। "क्यों यों चिन्तित बैठे हैं?" पन्नालाल ने उससे पूछा।

"इस गाँव के लोग बड़े दुष्ट हैं— छोटी-सी सहायता तक नहीं करते, और दवा के लिए आ मरते हैं।" वैद्य ने कहा।

"क्या सहायता चाहिए? बताइए, मैं करूँगा!" पन्नालाल ने कहा।

"तुम क्या मदद करोगे? गौ को ढोकर ले जाना है। ले जाओगे?" वैद्य ने कहा।

"यदि हो सका, तो ढोऊँगा—असली बात क्या है? गौ कहाँ है?" कह कर पन्नालाल ने धोती कमर में बाँधी। हुआ यह था कि वैद्य की गौ, घर के पास चर रही थी कि वह पास के गढ़े में गिर गई।

सामने के पैरों को काफ़ी चोट लग गई थी। उसे पास के गाँव के पशु वैद्य के पास ले जाना था। वह उठकर चल नहीं सकती थी। इसलिए उसको उठाकर ले जाना था।

वैद्य ने गौ को ढोने के लिए गाँववालों को बुलाया। पैसे देने का वादा करने पर भी कोई न आया।

यह सब सुनकर, पन्नालाल ने वैद्य से कहा—"हाँ, ढोने का काम मैं देखूँगा। आप कोई चिन्ता न कीजिये।" कहकर वह अपनी पत्नी मीनाक्षी को ले आया। गौ को एक तख्ते पर बिठाया, और उसे पन्नालाल और मीनाक्षी मिलकर उठाने लगे। "आप भी एक हाथ लगाइये।" पन्नालाल ने वैद्य से कहा।

"मैं!" वैद्य ने इधर उधर देखा, पर वह मदद करने नहीं गया। पन्नालाल और उसकी पत्नी जैसे भी हो, गौ को पशुशाला में से निकालकर बाहर लाये।

बाहर, कुछ लोग खड़े खड़े देख रहे थे कि क्या हो रहा था। अब उन्होंने आगे आकर कहा—"पन्नालाल जी, ठहरिए। हम आपकी जगह उठायेंगे। इस वैद्य के लिए, और उसके पैसे के लिए, तो हम कुछ नहीं करते, पर आपको यह मशक्कत करते कैसे देख सकते हैं।"

वे गौ को पास के गाँव में ले गये, और वहाँ गौ का इलाज करवा कर, वे वापिस ले आये।

वैद्य ने उनको धन देना चाहा। पर उन्होंने लिया नहीं। और कहा—"धन ही सब कुछ नहीं है। ज़रा गाँव का उपकार करना सीखिये। यही काफ़ी है।"

२८. "केक्टस"

निर्जल मरुस्थल में ६० फीट तक बढ़नेवाला "केक्टस" पौधा, सृष्टि की विचित्रता का अच्छा दृष्टान्त है। मेक्सिको के एक मरुस्थल प्रान्त में (केलिफोर्निया का नीचा भाग) यह पैदा होता है। मेक्सिको के लोग इसका शहतीर के रूप में उपयोग करते हैं। इन पर पक्षी घोंसला बनाते हैं।

Photo by Prabhakar Mahadik

पुरस्कृत परिचयोक्ति

दो बात दिलों की कर लें!

प्रेषक: रवीन्द्रकुमार जैन-खातौली

Photo by P. R. Shinde

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

जीवन में रस भर लें !!

प्रेषक :
रवीन्द्रकुमार जैन-खातौली

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

जून १९६४ :: पारितोषिक १०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें !

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिखकर निम्नलिखित पते पर तारीख़ ७ अप्रैल १९६४ के अन्दर भेजनी चाहिए।

फ़ोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन,
वडपलनी, मद्रास-२६

अप्रैल – प्रतियोगिता – फल

अप्रैल के फ़ोटो के लिए निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं।
इनके प्रेषक को १० रुपये का पुरस्कार मिलेगा।
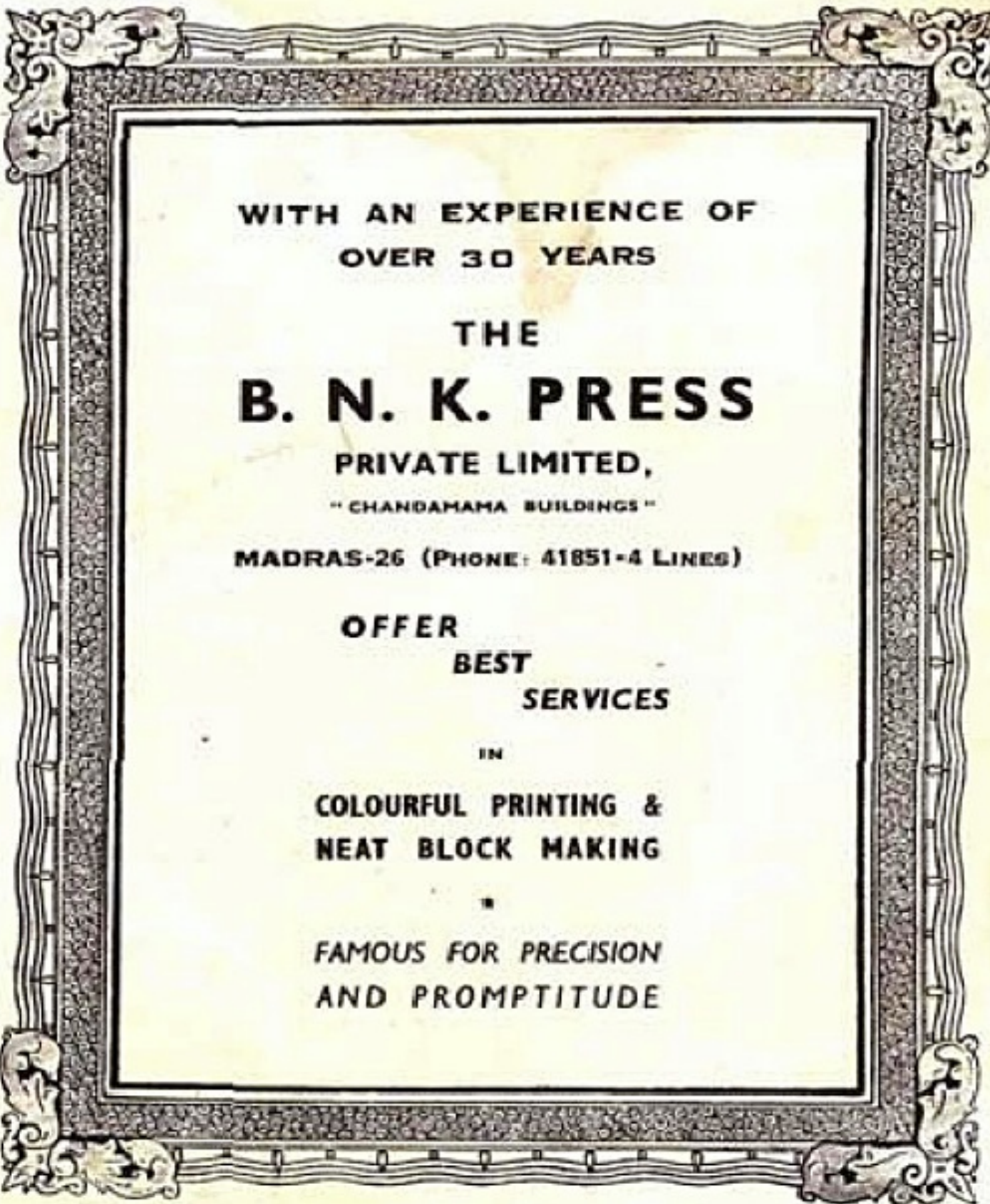
पहिला फ़ोटो : दो बात दिलों की कर लें !
दूसरा फ़ोटो : जीवन में रस भर लें !!

प्रेषक : रवीन्द्रकुमार जैन,
कुन्द कुन्द जैन इन्टर कालेज, पो० खातौली - मुजफ्फर नगर (उत्तर प्रदेश)

Printed by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press Private Ltd., and Published by B. VENUGOPAL REDDI for Sarada Binding Works, 2 & 3, Arcot Road, Madras-26. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'